सत्य को जानो-
मानो-स्वीकारो !

(नग्न सत्य का दिग्दर्शन)
कविताओं से संवर्द्धित

ग्रन्थ विमोचन

आचार्य कनकनन्दी द्वारा रचित 4 कविताओं की पुस्तक, 1 जीवविज्ञान की पुस्तक एवं ''आ. कनकनन्दी की आध्यात्मिक यात्रा'' का केलेण्डर के विमोचन का एक दृश्य। (सेमारी-2011)

आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव

सामूहिक केशलोंचन

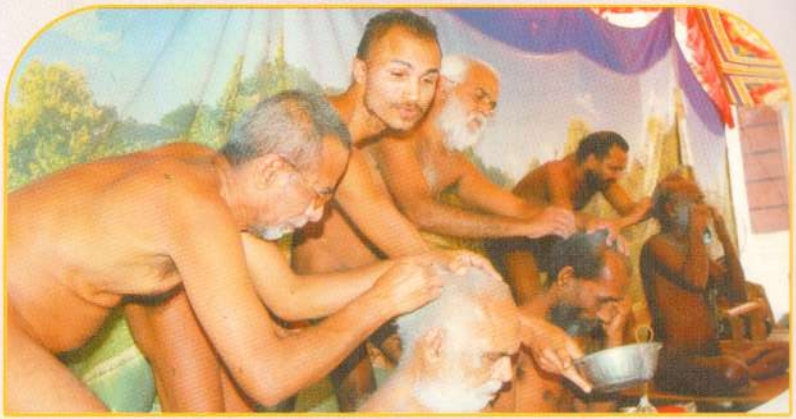

आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव, मुनि सुविज्ञसागर, मुनि चिन्मयानन्द का केशलोंच करते हुए मुनि तीर्थनन्दी, मुनि आज्ञासागर, मुनि पुण्यनन्दी, मुनि आध्यात्मनन्दी। (साधुतीर्थ पाडवा- 2007)

ग्रन्थ विमोचन

आचार्य कनकनन्दी द्वारा रचित ग्रन्थों का विमोचन करते हुए आचार्य महाश्रमण। विमोचन कराते हुए मणिभद्र जैन एवं विशाल जैन (केलवा 2011)

सत्य को जानो-मानो-स्वीकारो!

(नग्न सत्य का दिग्दर्शन) (कविताओं से संवर्द्धित)

लेखकः- आचार्य श्री कनकनन्दी जी

द्रव्यदाता

1. 'जैनमित्र' श्री शैलेन्द्र घीया
   52 ए, एक्रोपोलिस, शफी तय्यबजी मार्ग
   नीयर- हैंगिंग गार्डन, मुम्बई- 400006
   Res. 022-23640066
   Mob.: 9320640066, 9928301009 (Raj.)
   e-mail : polyplasticbom@vsnl.net
2. श्री आदिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर, उथरदा (सलुम्बर)
3. भेरूलाल जी मोहनलाल जी देवड़ा, उथरदा (राज.)

ग्रंथाङ्क - 91 द्वितीय संस्करण - 2011

प्रतियाँ - 1000 मूल्य - 51/-रु.

-: प्राप्ति स्थान :-

धर्म दर्शन सेवा संस्थान, द्वारा - श्री छोटूलाल जी चित्तौड़ा,
चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर आयड़, आयड़ बस स्टॉप के पास, उदयपुर
(राज.) - 313001 मो. 9783216418

-: सम्पर्क सूत्र :-

डॉ. नारायणलाल कछारा (सचिव)
55, रवीन्द्र नगर, उदयपुर (राज.) - 313001
फोन नं. (0294) 2491422, मो. 9214460622

सत्य-दर्शन

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।

क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे ।।8।। मुण्डकोपनिषद्

उस परम सत्य को/परमात्मा को यथार्थरूप से जान लेने पर जीव के हृदयस्थ समस्त बन्ध, गांठ, संक्लेष, द्वन्द्व नष्ट हो जाते हैं, सम्पूर्ण संशय भ्रम कट जाते हैं, समस्त कर्म नष्ट हो जाते हैं।

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा

सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम्।

अन्तः शरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो।

यं पश्यन्ति यतयः क्षीणदोषाः ।।5।। मुण्डकोपनिषद्

जीव के अन्तःकरण/अन्तः चेतना में ही ''सच्चिदानन्द स्वरूप'' ''सत्यम् शिवम् मंगलं'' भूत ज्ञान-ज्योतिर्मय परम विशुद्ध परमात्मा विराजमान है। उसकी उपलब्धि दर्शन, सत्य, तप, ब्रह्मचर्य और सम्यक्ज्ञान होता है। इसकी प्राप्ति समस्त मानसिक एवं आध्यात्मिक दोष स्वरूप काम, क्रोध, मद, ईर्ष्या, लोभ, घृणा, अंधविश्वास, संकीर्णता आदि से रहित प्रयत्नशील साधकों को होती है।

अविद्याभिदुरं ज्योतिः परं ज्ञानमयं महत्।

तत्प्रष्टव्यं तदेष्टव्यं तद्दृष्टव्यं मुमुक्षुभिः ।।47।। इष्टोपदेश

हे मोक्ष को चाहने वाले! अविद्यारूपी अन्धकार को दूर करने वाली ज्ञान स्वरूप ज्योति जो महान् है उसके बारे में जिज्ञासा करो, उसकी कामना करो, उसका दर्शन करो।

मंगलाशीष एवं मंगलाशायें

सत्यमेव जयते नानृतं

सत्येन पन्था विततो देवयानः।

येनाक्रमन्त्यृषयो ह्याप्तकामा

यत्र तत् सत्यस्य परमं निधानम्।।

मुण्कोपनिषद् पृ. 222

सत्य की ही विजय होती है, झूठ की नहीं। अभिप्राय यह है कि परमात्मा सत्य स्वरूप है, अतः उनकी प्राप्ति के लिए मनुष्य में सत्य की प्रतिष्ठा होनी चाहिए। परमात्मा की प्राप्ति के लिए तो सत्य अनिवार्य साधन है ही, जगत् में दूसरे सब कार्यों में भी अन्ततः सत्य की ही विजय होती है, झूठ की नहीं। जो लोग मिथ्या भाषण, दम्भ और कपट से उन्नति की आशा रखते हैं, वे अन्त में बुरी तरह से निराश होते हैं। मिथ्या भाषण और मिथ्या आचरण में जो सत्य का आभास है, जिसके कारण दूसरे लोग उसे किसी अंश में सत्य मान लेते हैं, उसी से कुछ क्षणिक लाभ सा हो जाता है। परन्तु उसका परिणाम अच्छा नहीं होता। अन्त में सत्य सत्य ही रहता है, और झूठ झूठ ही। इसी से बुद्धिमान मनुष्य सत्य भाषण और सदाचार को ही अपनाते हैं, झूठ को नहीं, क्योंकि जिनकी भोग-वासना नष्ट हो गयी है, ऐसे पूर्णकाम ऋषिलोग जिस मार्ग से वहाँ पहुँचते हैं जहाँ इस सत्य के परमाधार परमब्रह्म परमात्मा स्थित है, वह देवयान-मार्ग अर्थात् उन परम देव परमात्मा को प्राप्त करने का साधन रूप मार्ग सत्य से ही परिपूर्ण है, उसमें असत्य भाषण और दम्भ, कपट आदि असत् आचरणों के लिए स्थान नहीं है।

सत्य में ही विश्व प्रतिष्ठित है। अहिंसा, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, क्षमा विश्वास, ज्ञान-विज्ञान, चरित्र, नम्रता, सरलता, निर्भयता, अनेकान्त, स्याद्वाद, आत्मा, परमात्मा और अधिक क्या वर्णन किया जाय? मोक्ष तक सब सत्य ही है। सत्य के बिना ये सब मिथ्या, अन्धविश्वास, अयथार्थ, आडम्बर, खोखला, मृगमरीचिका के समान विभ्रम है। इसलिए धर्म, विज्ञान, परम्परा, संस्कृति,

सभ्यता, राजनीति, कानून आदि में सत्य का होना केवल आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। इसलिए मैंने जो अभी तक धर्म, विज्ञान, दर्शन, इतिहास आदि से सम्बन्धित प्रायः 100 ग्रन्थ लिखे हैं जिनमें से 70 ग्रन्थ विभिन्न भाषाओं में अनेक संस्करणों में प्रकाशित हो गये हैं, उनमें मैंने सत्य को ही केन्द्र करके सत्य के ही प्रचार-प्रसार और प्रतिष्ठा के लिए भागीरथी प्रयास किया है। मैं सर्वोपरि सत्य का ही उपासक हूँ। मैं सत्य के माध्यम से ही सुख, शान्ति, सद्भावना, प्रभावना, विश्वमैत्री, संगठन, भ्रष्टाचार-उन्मूलन, मिथ्या-परम्परा एवं रूढिवादिता का खण्डन, शिथिलाचार/उत्शृंखलता/अनुशासनहीनता/कर्त्तव्यपरान्मुख आदि का विनाश करके सत्य का सार्वत्रिक, सार्वभौम अनुशासन चाहता हूँ। इस प्रयास के लिए मैं अखिल विश्वमानव से तन-मन-धन एवं समय की सहायता चाहता हूँ। इसी उद्देश्य को पूर्ण करने के लिए मैं साहित्य रचना के साथ-साथ प्रवचन विद्यार्थी-विद्यार्थिनी की कक्षा एवं शिविर लेता हूँ एवं स्कूल, कॉलेज, शिक्षक-ट्रेनिंग सेन्टर, जेल, मिलेट्री/सैनिक छावनी आदि में प्रवचन करता हूँ। उसी को और तीव्रता से आगे बढ़ाने के लिए एवं अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में प्रचार करने के लिए 16-10-97 से 18-10-97 तक सागवाड़ा में वैज्ञानिक राष्ट्रीय संगोष्ठी रखी गयी है। इस संगोष्ठी में प्रायः 125 जैन, हिन्दू, मुसलमान वैज्ञानिक एवं विद्वान् शोध पत्र प्रस्तुत करेंगे एवं विचार-विमर्श करेंगे। आचार्य उमास्वामी कृत "तत्त्वार्थ सूत्र के ऊपर जो मैंने विभिन्न धर्म एवं विज्ञान का समन्वय करके समीक्षात्मक टीका की है, उसके परिप्रेक्ष्य में यह संगोष्ठी हो रही है। इस मंगल बेला में इस "नग्नसत्य का दिग्दर्शन" नामक ग्रंथ का प्रकाशन हो रहा है। इसमें मैंने विभिन्न विषयों का संक्षिप्त परन्तु सटीक, सशक्त समीक्षात्मक वर्णन किया है। इससे विश्व सत्य का दर्शन एवं दिग्दर्शन प्राप्त करके उन्नति के पथ पर आगे बढ़े ऐसी मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ हैं। मेरा किसी से राग-द्वेष नहीं है। तथापि सत्य को उजागर करने में जो मैंने कुछ वर्णन किया है उसे कोई अन्यथा न लेकर सत्य के प्रकाश में अवलोकन करें। मेरे इस सत्यनिष्ठ, विनम्र प्रयास में यदि कहीं पर कुछ गलती हो तो उस गलती को मुझे सूचित करें। इस संगोष्ठी में तन-

मन-धन एवं समय से सहायता करने वालों को, भाग लेने वालों को मेरा मंगलमय शुभ आशीर्वाद है। सत्य के प्रचार-प्रसार के लिए यह राष्ट्रीय संगोष्ठी मंगलाचरण का प्रथम सोपान है। यह मंगलाचरण रूपी संगोष्ठी भविष्य में अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी में परिणित हो एवं सबके लिए मंगलदायक हो ऐसी मेरी मंगल कामना है। जिस प्रकार सागवाड़ा में जैन दिगम्बर जैन- श्वेताम्बर जैन, हिन्दू-मुसलमान, बोहरा में परस्पर प्रेम एवं संगठन है उसी प्रकार विश्व में ऐसा ही प्रायोगिक प्रेम एवं संगठन बने ऐसी पवित्र भावना भाता हूँ।

विश्व पूर्ण सत्य को जान, मान एवं प्राप्त कर, ऐसी महती शुभकामना के साथ-

आचार्यरत्न कनकनंदी
सागवाड़ा जि. (डूँगरपुर)
दिनांक- 29/8/97

आचार्यश्री की कुण्डली

कनकाध्यात्मिक रत्नश्री कनकनंदीमुन्याचार्य
रत्नात्माश्रीपादारविन्दाभ्यान्नमो नमः।।

"श्री कनकनंदी जिनाचार्य एवं जीवोत्थान महाव्रत"

श्री जितेन्द्र महाचार्य प्राज्ञं कनकनंदीशम्।
वैज्ञानिक तपोमूर्ति भूयो भूयो नमाम्यहम्।।

यह अतीव स्वर्णिम अवसर है जो कि कई जन्म जन्मांतरों में कृत पुण्यपुंजों के प्रसाद से जिनाचार्य रत्नदीप श्री कनकनंदीजी गुरुदेव के दिव्यलोकित व्यक्तित्व पर दो शब्द प्रसून अर्पण करने का परम सौभाग्यावसर प्राप्त हो पाया है।

मुनि पद की साधना से आचार्यपदालंकृत करने के पूर्व जीवन में लोक कल्याण, सकलजीवोत्थान की लगन एवं पवित्र ललक ने एक सामान्य जीवन से उठाकर उच्च स्तरीय आध्यात्मिक एवं मूल्यांकन स्तर पर आपको

प्रतिष्ठापित किया है। मानवीय मूल्य के संरक्षण, लोकं संस्कृति के संवर्धन, वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा महाज्ञान के चमत्कार आदि प्रकरणों पर सतत शोधरत आचार्यश्री का जीवन अत्यन्त अनुकरणीय है। साथ ही वे हर श्रोता को विविध विषयोपविषयों का दिव्यज्ञान अपने प्रवचनामृत रूपी संजीवित लहरों से प्रदान करते हुए मंत्रमुग्ध करते हैं।

आपका ज्ञान-विज्ञान, साहित्य-काव्य, संगीत, गणित, ज्योतिष, कला, धर्म मीमांसा तथा प्राचीन एवं आधुनिक विविध शास्त्र सम्मत पक्षों पर वैषयिक अधिकार है। तथापि सादगी, सौम्यमूर्ति स्वरूप आपकी देह ज्योति हर किसी को ध्यान मग्न कराती है। इसलिए हजारों जनमानसों का पारावार उमड़-उमड़कर आपकी ओर आकर्षित हो रहा है। आपका सरल जनभाषा का साहित्य बालोपयोगी, जनोपयोगी तथा राष्ट्रीय एकता का पोषक है।

उच्चस्तरीय दार्शनिक मूल्यों के महाज्ञाता, सच्चिदानंद चिंतन के मार्तण्ड आचार्यभगवंत सभी प्रश्नों के उत्तर आनंददायिनी भाषा में सतर्क व सटीक सोदाहरण प्रदान करते हैं। यह एक गौरव का विषय है। कथनी करनी में विवेक, स्वनामधन्य, तपोमूर्ति तथा विद्यार्थियों को सन्मार्ग प्रशस्त करने वाले, राष्ट्रीय सर्वान्तिम हित निर्णायक, दिग्दर्शक के बारे में भला मैं क्या लिख सकता हूँ? कहते हैं कि महापुरुषों के प्रत्येक क्षण, क्रियान्वित मुद्रायें रहस्यमय होती हैं तथा प्रकृति पुरुष को व्यक्त करना मूर्खता है। अतः मैं गुणगान की रीति नीति का अबोध बालक यहीं विराम लेता हूँ।

अब मुनिपद ग्रहणावसर तथा आचार्य पदालंकृतावसर पर ज्योतिर्विज्ञान अवलम्बित अनुसंधान करते हैं-

मुनिप्रद ग्रहण

विक्रम संवत 2037, वीर निर्माण संवत 2506, शालिवाहन शकाब्द 1902 कलियुग वर्ष 5081, सौम्यायन, शिशिरऋतु, माघमास शुक्लपक्ष प्रतिपदा, दिन गुरुवार, धनिष्ठा नक्षत्र, मकर का चन्द्र में तदनुसार दिनांक 5-2-1981 को प्रातःकाल कुंभलग्न में मुनि दीक्षा ग्रहण की।

(तात्कालिक ग्रहापग्रहं स्थिति)

श्री दीक्षांगम

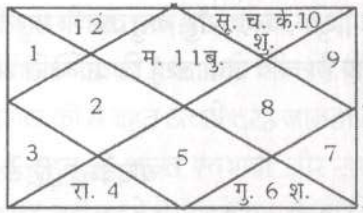

श्री चन्द्रांगम

मंगल की दशा में दीक्षा ग्रहण की

आचार्य पदारोहण

स्वस्ति श्री संवत् 2053, श्री वीर निर्वाण संवत् 2522, शकाब्द 1918, कलियुगी गताब्द 5097, उत्तर गोलायन, ग्रीष्मऋतु, वैशाखमास, शुक्लपक्ष सप्तमी तिथि गुरुवार पुनर्वसु परं पुष्य नक्षत्र प्रथम चरण गुरु पुष्यामृत योग, मेषार्क, कर्केन्दु, गंगा सप्तमी प्रातः 8:40 उदयपुर क्षेत्र की पुण्यपवित्री बेला में पूज्याचार्य श्रीमान् के द्वारा आचार्यपदालंकृत किया गया। तत्कालीन निम्नानुसार गणितसाधन किया गया है:-

अथाचार्य पद ग्रहणांगम

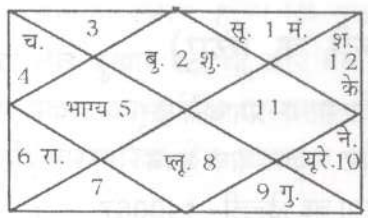

श्री मंचन्द्रोगम्

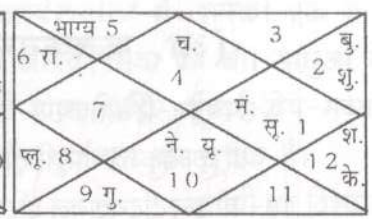

आचार्यश्रभ के मुनि पदांग में शुक्र विशिष्ट ग्रह है। चन्द्रांग में भाग्येश व लग्नेश का विशेष राजयोग बना है जिससे यह स्पष्ट है कि साधना एवं सिद्धि के क्षेत्र में सफलताएँ मिलेंगी। आचार्य के समय में गोचरांग व आचार्यग्रहणांग में लग्नेश शुक्र, राजयोग कारक शनि क्रमशः सिंह एवं कन्या नवांशान्तर्गत है। तथा चन्द्रांग में भाग्यस्थ, शनि, केतु, मीनगत एवं चन्द्र, शुक्र के सिंह नवांश राशि में भाग्य का होना। भविष्य में धार्मिक विशिष्ट पदप्राप्ति एवं

सिद्धियोग है। यद्यपि गुरु के धनुस्थ छवे स्थान में होने पर अस्वस्थता, अन्य प्रकरणों एवं विविध सेवाओं में जुड़े रहने से प्रारम्भिक कठिनाइयाँ, स्थायित्व एवं सफलार्जन में होगी। सूर्य, मंगल, बुध, शुक्र, चन्द्र, राहु, केतु क्रमशः भारतीय स्तर पर पदमान ग्रहण के योग बना रहा है। जीव सेवा तथा क्रियान्विति सभी सिद्धियों की जननी है। जय भारत।

यादवेन्द्र द्विवेदी।
संरक्षक, श्री परेश जीवोत्थान एवं शोध प्रासाद
भीलूड़ा- डूंगरपुर (राज.)- 314031
दूरभाष - (02966) 24203

यह सत्य है कि धर्म शाश्वतिक है, प्रजा को धारण करता है, इससे ही सुख-शान्ति मिलती है, यह धारण करने योग्य है, इससे ही सिद्ध, बुद्ध, तीर्थंकर, भगवान्, महात्मादि बनते हैं, परन्तु यह भी सत्य है कि धर्म के नाम पर ही अधिक भेद, घृणा, हिंसा, युद्ध, विध्वंसादि हुए हैं।

आचार्यश्री विद्यानन्दजी का पत्र

(आ. कनकनन्दी के लिए)

उपगूहन-स्थितिकरण-वात्सल्य-प्रभावना हेतु
श्री कुन्दकुन्द भारती ट्रस्ट प्राकृत भाषा भवन
18- बी इन्स्टीटयूशनल एरिया नई दिल्ली- 110067
दूरभाष : 26564510, 26513138 वी.नि. 2534

दि. 25/11/2006

''ये व्याख्यन्ति न शास्त्रं ददाति शिक्षादिकञ्च शिष्याणाम्।
कर्मोन्मूलनशक्ता ध्यानरतास्ते साधवो ज्ञेयाः।।''

-क्रियाकलाप, पृष्ठ 143

जो न तो व्याख्यान देते हैं, न शास्त्र रचना करते हैं और न ही शिष्यों को

शिक्षा आदि देते हैं, ऐसे कर्मों के विनाश में समर्थ ध्यानलीन पुरूषों को साधु जानना चाहिए।

धर्मानुरागी आचार्यश्री कनकनन्दी जी

प्रतिवंदना! आशा है आपका रत्नत्रय वृद्धिंगत होगा। आचार्य भरतसागरजी मुनिराज को मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। वे लगभग दो वर्ष तक मेरे साथ रहे थे। वे बहुत ही शान्त स्वभावी और सरल हृदयी थे। कभी किसी को कोई अपशब्द नहीं कहते थे। सच्चे साधु की भाँति उनकी वाणी पर हमेशा सत्यमहाव्रत, भाषासमिति और वचनगुप्ति की लगाम होती थी। फिर भी आज जो लोग उनके बारे में और उनकी समाधि के बारे में मिथ्या बोल रहे हैं, उनकी वाणी सर्वथा अनर्गल है, बेलगाम है, शास्त्रसम्मत नहीं है।

अतः मेरा आपसे यही कहना है कि आप शान्ति रखें। यह कलियुग हैं, इसमें कलहपाहुड के उपदेशक बहुत मिल रहे हैं। क्या करें, इसमें ऐसा ही चलता है। आप तो बहुत सज्जन हैं और अत्यधिक अध्ययनशील हैं। आप बहुत तोल-मोल कर ही हर शब्द बोलते हैं। आपकी अध्ययनशीलता का तो आज हमारे सर्व साधुओं को अनुकरण करना चाहिए।

आपको स्मरण होगा कि श्रवणबेलगोला में आपको एक माह तक तेज बुखार रहा था और मैंने आपकी सेवा की थी। साधुओं में इस प्रकार का हार्दिक वात्सल्य ही होना चाहिए, ईर्ष्या-द्वेष-मत्सर नहीं। पारस्परिक द्वेष अज्ञानता और दुर्जनता का सूचक है।

आपश्री का विश्वासु
आचार्य विद्यानन्द मुनि

स्वसंघ के आदर्शों के द्वारा जैन धर्म का प्रचार-प्रसार

विश्व स्तर पर संभव

(आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव के संघ की नियमावली)

1. संघ में चातुर्मास, केशलोंच, (दीक्षा जयन्ती, आचार्य पद जयन्ती, जन्म-जयन्ती आदि नहीं मनेंगी) की आमंत्रण पत्रिका नहीं छपेगी। वैसे गुरुदेव इन पत्रिकाओं को पहले से ही छपवाने के पक्ष में नहीं थे, अगर श्रावक अपनी स्वेच्छा व भक्ति से चातुर्मास की पत्रिका छपवाते भी हैं तो गुरुदेव संघस्थ उनको नहीं भेजेंगे, श्रावक ही भेजेंगे। इसलिए सूचना हेतु सामान्य व कम मात्रा में ही श्रावक पत्रिकाएँ छपाये। संगोष्ठी, शिविर, दीक्षा-महोत्सव आदि विशेष कार्यक्रम की पत्रिका के लिए उपर्युक्त प्रावधान नहीं है।
2. प्रवचन-विधान/पंचकल्याणक/मठ-मन्दिर-मूर्ति निर्माण/वेदी प्रतिष्ठा/शिविर/संगोष्ठी/साहित्य प्रकाशन/देश-विदेश में धर्म प्रचार कार्य/विश्व-विद्यालयों में शोधकार्य/विश्व-विद्यालयों में आचार्य कनकनन्दी साहित्य कक्ष की स्थापना इत्यादि कार्य पहले से ही स्वेच्छा, सहजता-सरलता से होते थे तथा आगे भी होंगे।
3. जिससे श्रावक पर अधिक आर्थिक बोझ पड़ता हो ऐसे कार्य स्वयं श्रावक अपनी शक्ति-भक्ति स्वेच्छा से करते हैं तो स्वयं करें, संघ ऐसे कार्यों को करने हेतु दबाव नहीं डालेगा।
4. आचार्य भगवन् की अनुमति के बिना संघ के कोई भी सदस्य (साधु/साध्वी, ब्रह्मचारी-ब्रह्मचारिणी-श्रावक) किसी भी प्रकार की वस्तु श्रावक से नहीं माँगेंगे और न आदेश देंगे।
5. किसी भी प्रकार की बोली हेतु संघ दबाव नहीं डालेगा।
6. संस्था के विभिन्न वैज्ञानिक उपकरण आवश्यकता के बिना संघ में

नहीं, संस्था में ही रहेंगे।

7. संकीर्ण पंथवादी, अर्थलोलुपी, अयोग्य, अनुशासनविहीन, अविनयी, गृहस्थ, विद्वान, पंडित, ब्रह्मचारी-ब्रह्मचारिणी, साध्वी, साधु (स्व या परसंघ) के लिए भी संघ में अनुमति नहीं है। उपर्युक्त गुणों से युक्त व्यक्ति से लेकर साधुओं को संघ में स्वीकार्य करने का कार्य आचार्य गुरुदेव के निर्णय पर ही होगा।
8. संघ में संकीर्ण मतवाद, पंथवाद, परम्परावाद, संतवाद, ग्रन्थवाद, जातिवाद, राष्ट्रवाद से परे उदार सहिष्णु, सनम्रसत्यग्राही, अनेकान्तमय वैज्ञानिक पद्धति से स्व-पर-विश्वकल्याणकारी विचार-व्यवहार-कथन लेखन-अनुसंधान-प्रचार-प्रसार को ही महत्व दिया जा रहा है, आगे भी दिया जायेगा।
9. जिस द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, परिस्थिति, समाज में उपर्युक्त उद्देश्य एवं कार्य सम्पन्न होंगे ऐसे क्षेत्रादि विशेषतः योग्य ग्रामादि, शहरादि में ही संघ का विहार, निवास, चातुर्मास अधिक से अधिक होगा।
10. संघ के सभी सदस्य स्वावलम्बी बनेंगे यानि अपना कार्य स्वयं करेंगे तथा स्वानुशासी यानि संघ के नियम-कानून-अनुशासन का पालन करेंगे एवं प्रत्येक कर्त्तव्य समय पर करेंगे।
11. स्वास्थ्य की विशेष समस्या के कारण अपवाद से जो उपचार के रूप में पंखादि, औषधि आदि का प्रयोग होता है उस समस्या का समाधान होने के बाद उसका प्रयोग नहीं करना।
12. संघस्थ सभी सदस्य परस्पर में वात्सल्य, सेवा, सहयोग, स्थितिकारण, उपगूहन से युक्त होंगे।

I आहार सम्बन्धी नियम-

1. रसोई गैस से बना भोजन-पानी-दूध का त्याग-

करोड़ों त्रस जीवों के शरीर से निर्मित, असंख्य स्थावर जीवों के हिंसाकारक,विस्फोट से घर के जलने से लेकर अनेक नर-नारियों की मृत्यु के कारक तथा अनेक रोगों के कारणभूत गैस से निर्मित भोजन आदि का त्याग का नियम है। विस्तृत विवरण आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव के साहित्यों से प्राप्त करें।

2. मटर, टमाटर, ग्वारफली, बेसन, उड़द, मसूरदाल, तुन्दरू (टिंडूरी,टोंडले), सेंगरी (मोगरी), तरबूज, खरबूज, सेमफली, लाल मिर्च तेल आदि का त्याग।
3. शक्कर, नमक आदि का कम प्रयोग।
4. अधकच्चा-अधपका भोजन अभक्ष्य एवं स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होने से त्याग।
5. कच्चा खट्टा फल, खट्टा दही-मट्ठा आदि त्याग।

II योग्य निवास-

स्वास्थ्य रक्षा, ध्यान, अध्ययन, अध्यापन, साहित्य-लेख-कविता आदि लेखन, धार्मिक कक्षा, शिविर, संगोष्ठी, देश-विदेश में धर्म की प्रभावना, विश्राम-शयन, आहार क्रिया आदि के योग्य स्थान-ग्राम-नगर में आचार्य श्री कनकनन्दी ससंघ का विहार, प्रवास, चातुर्मास आदि होंगे।

III शौच क्रिया योग्य स्थान-

साधुओं के मूलगुण स्वरूप प्रतिष्ठान समिति (शौचक्रिया), प्रातः- सन्ध्या भ्रमण, योगासन, प्राणायाम, ध्यान आदि के लिए योग्य प्रदूषणों से रहित-शान्त-स्वच्छ स्थान (निवास स्थान से 2-3 कि.मी. दूर तक) सहित ग्राम-नगरादि में श्री संघ सहित आचार्य श्री निवास-चातुर्मास आदि करेंगे।

IV आचार्य कनकनन्दी की स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याः-

आचार्य श्री कनकनन्दीजी गुरुदेव की विदग्ध अम्लपित्त (हाईपर एसिडिटी) शारीरिक गर्मी, एलर्जी के कारण उपरोक्त योग्य भोजन, निवास स्थान आदि की आवश्यकता है अन्यथा आचार्य श्री की स्वास्थ्य समस्याएँ (वमन (उल्टी-कै) चक्कर, बेहोशी, हैजा, पीलिया, सुस्ती आदि) हो जाती है। आचार्य श्री शीत-ऋतु को छोडकर अन्य समय में गरम करके ठंडा किया हुआ पानी, दूध, भोजन आदि आहार में लेते हैं।

V विविध ज्ञानार्जन के नियमः-

अनुशासन, समयानुबद्धता, समय की कमी के कारण धर्म, दर्शन, विज्ञान, गणित, आयुर्वेद, भाषा, व्याकरण, नैतिक शिक्षा, सामान्य ज्ञान, प्रूफ रीडिंग, प्रबन्धन आदि का अध्ययन-अध्यापन-प्रशिक्षण, चर्चा, शंका समाधान आदि सामुहिक रूप से कक्षा, शिविर, संगोष्ठी आदि संघ में होता है। विशेष परिज्ञान आचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव के साहित्य से प्राप्त कर सकते हैं।

VI स्वास्थ्य सम्बन्धी सामुहिक प्रशिक्षण के नियमः-

स्वास्थ्य रक्षा के नियम, रोग दूर करने के उपायभूत आदर्श आहार, विचार, दैनिकचर्या, प्राणायाम, योगासन, ध्यान आदि का प्रशिक्षण संघ में सामूहिक कक्षा, शिविर, संगोष्ठी में ही दिया जाता है तथा आचार्य श्री के विभिन्न साहित्यों में भी वर्णित है किन्तु व्यक्तिगत नहीं दिया जाता है अतः कक्षा आदि से लाभान्वित हों परन्तु व्यक्तिगत न चाहें, न ही पूछें, न ही कुछ मांगे। विशेष परिज्ञान आचार्यश्री के साहित्यों से प्राप्त कर सकते हैं। ऐसा ही अन्यान्य समस्या/शंका-समाधान सम्बन्धी जान लेना चाहिए।

VII त्याग-व्रत-नियम-वचन सम्बन्धी अनुशासनः-

(A) किया गया त्याग एवं लिया गया व्रत-नियम पालन करेंगे।

(B) त्याग किया गया गृहस्थ जीवन सम्बन्धी विषय (शादी,विवाह, व्यापार, कुटुम्ब, परिवार, नौकर-चाकर, पढ़ाई, नौकरी आदि) चर्चा नहीं करेंगे, न ही लिखेंगे अर्थात् नव कोटि से त्याग रहेगा।

(C) गृहस्थी सम्बन्धी किसी भी प्रकार के विषयों को मन-वचन-काय, कृत, कारित, अनुमोदना से त्याग करेंगे।

(D) विकथा, निन्दा, चुगली, वाचालता, राग-द्वेष-ईर्ष्या-घृणा-लड़ाई-झगडा-फूट डालने योग्य वचन, कठोर आदि वचन पूर्ण त्याग करेंगे। अतः उपरोक्त विषयों की चर्चा संघ के साथ अन्य कोई गृहस्थ-श्रावक-साधु-साध्वी आदि न करें।

(E) संघ में किसी भी प्रकार ख्याति, पूजा, लाभ, प्रसिद्धि, चन्दा-चिट्ठा, याचना, किसी भी प्रकार से दूसरों के ऊपर दबाव डालने के काम पूर्णतः वर्जित है।

(E) आचार्य श्री कनकनन्दीजी गुरुदेव अधिक से अधिक एकान्तवास में मौनपूर्वक साधना रत रहते हैं।

सुविचार :-

1. जो व्यर्थ बात है चाहे वह किसी के द्वारा कही गई हो, उसका उत्तर देने का सवाल ही कहाँ उठता है? आप खुद ही सोचिये! उसे उत्तर देने योग्य मानकर आप उसे सार्थक नहीं मान लेते हैं?/बना देते हैं?
2. झूठे शब्द सिर्फ खुद में बुरे नहीं होते बल्कि वे आपकी आत्मा को भी बुराई से संक्रमित कर देते हैं।
3. संस्कारवान् का परिचय :- किसी मनुष्य या स्त्री की संस्कृति या संस्कार का पता इस बात से लग जाता है कि वे झगड़ने के समय कैसा व्यवहार करते हैं। (जार्ज बर्नार्ड शॉ)
4. **सत्साहसी का परिचयः-** दबाव, तनाव और विपदा की स्थिति में भी मर्यादा का परिचय देना, साहस की बस यही परिभाषा है। (अर्नेस्ट हेमिंग्वे)

5. कोई यदि योगी बाहर के शक्ति जगत से अपने को पृथक् करके एकान्त में रह तो वह सब तरह के रोगों से मुक्त हो सकता है। (महर्षि अरविन्द घोष)
6. संसार में वही सबसे अधिक भाग्यवान् है, जिसके मन की प्रवृत्तियों को संसार की श्रृंगारिक वस्तुएँ अपनी ओर खींचने में असमर्थ रहती है। (टालस्टाय)

-उपरोक्त नियम के सारांश-

आचार्यश्री कनकनन्दीजी गुरुदेव आगम, विज्ञान, मनोविज्ञान, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, अनुभव, स्वास्थ्य, साधना, शान्ति, स्वाध्याय, ध्यान, स्वप्न, शकुन, अंगस्फुरण, पूर्वाभास, समाज, परिस्थिति, पर्यावरण, साहित्य लेखन एवं प्रकाशन तथा देश-विदेश में आचार्यश्री के शिष्यों द्वारा हो रही धर्म प्रभावना की दृष्टि से आहार, विहार, निवास, चातुर्मास आदि करते हैं एवं आगे भी करेंगे।

गुरुदेव को आहार देंगे

गुरुओं को पड़गायेंगे....भक्ति से आहार देंगे।
सेवा भक्ति से करेंगे....उनसे शिक्षा पायेंगे।
धर्म को पालन करेंगे....अन्त में मोक्ष को वरेंगे। ला..ला..ला..ला..

ज्ञानार्जन से सर्वज्ञ बनेंगे

शास्त्र श्रवण करेंगे....ज्ञान का अर्जन करेंगे।
सत्य-असत्य जानेंगे....सत्य को सदा मानेंगे।
सदाचार पालेंगे....सर्वज्ञ हम बनेंगे। ला..ला..ला..ला..

विषयानुक्रमणिका

अ.क्र.	विषय एवं गीत क्रमांक	पृ.क्र.
I	सत्य-दर्शन	
II	मंगलाशीष एवं मंगलाशायें	
III	आचार्यश्री की कुण्डली	
IV	आचार्यश्री विद्यानन्दीजी का पत्र (आचार्यश्री कनकनन्दीजी के लिए)	
V	स्वसंघ के आदर्शों के द्वारा जैन धर्म का प्रचार-प्रसार विश्व स्तर पर संभव (आचार्यश्री कनकनंदीजी गुरुदेव के संघ की नियमावली)	

प्रकरण - I

सत्य परिज्ञान के लिए मोह एवं अज्ञान के अंधकार को दूर करो-

1. विपरीत ज्ञान से विपरीत मान्यता
2. धर्मशून्य धर्माचार
3. दुनियाँ की विचित्रता
4. क्यों करे है ढोंगाचार?
5. मानव के महान् होने पर
6. महान् बनने के लक्षण
7. महापुरुषों से मानव जाति महान् अन्यथा दानव
8. सब न होते महान् या दुर्जन
9. खोटे छोटे लक्ष्य धारी अनुदारी
10. विज्ञान से महान् धर्म की उपयोगिता क्यों कम हो रही है?!
11. संकल्प (वैश्विक लक्ष्य-साधना एवं सिद्धि)
12. धर्म रहित विज्ञान अंधा, अवैज्ञानिक धर्म पंगु!

13. अंयथार्थ की चकाचौंध से छिपा हुआ यथार्थ
14. दूर से सुन्दर लगे
15. दुनियाँ वालों की दोगली कहानी
16. सुखी एवं दुःखी होने के कारण
17. विज्ञान के अन्धकार पक्ष
18. बड़ा ही स्वार्थी है मानव मनुआ
19. अपनी महत्ता हे मानव! तुम तो जानों
20. न्यायाधीश की आत्मकथा

प्रकरण - II

भारतीय! अपनी कमियों के लिए पाश्चात्य संस्कृति को दोष न दें, किन्तु उसकी अच्छाईयों को स्वीकार करें!

1. क्या पाश्चात्य संस्कृति (सभ्यता) ही दोषी है?

प्रकरण - III

महानता एवं क्षुद्रता के लक्षण

1. बड़ा हुआ तो क्या हुआ?

प्रकरण - IV

नगर की समस्याएँ - (कारण एवं निवारण)

1. नगर बनाम नरक
2. आर्य संस्कृति जननी
3. मेरे देश की संस्कृति
4. भो इंडियन, इडियट को त्यागकर विश्वगुरु बनो

5. तुच्छ (नीच) व्यक्ति के व्यक्तित्व (दुर्जन की आंत्मकथा)
6. क्यों करो अभिमान रे!
7. हिम्मत हो तो मानव
8. जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण की आपदाएँ तथा मुक्ति के उपाय
9. भारतीयों की स्टेटस सिम्बल- अप-टु-डेट की विकृत मानसिकता
10. सेवक की आत्मकथा

प्रकरण - V

राष्ट्र के रक्षक एवं भक्षक के स्वरूप

1. रक्षक रूप में भक्षक मत बनो
2. सैनिक की आत्मकथा
3. आचार्यश्री कनकनन्दीजी के शोधपूर्ण-ग्रंथ
4. आचार्यश्री के आगामी प्रकाशनाधीन- ग्रन्थ

मन्दिर तथा हम

मन्दिर धर्म का स्थान है,....धर्म हमारी शान है।
मन्दिर हम जायेंगे,....धर्म की शिक्षा पायेंगे।
हम शान्ति से रहेंगे....अन्त में मोक्ष पायेंगे। ला..ला..ला..ला..

गुरुदेव तथा हम

गुरु हमारे रक्षक हैं....हमारे पथ दर्शक हैं।
उनसे ज्ञान पायेंगे....सही धर्म अपनायेंगे।
धर्म से पवित्र होयेंगे....अन्त में मोक्ष पायेंगे। ला..ला..ला..ला..

प्रकरण - 1

सत्य परिज्ञान के लिए मोह एवं अज्ञान के अन्धकार को दूर करें

(-विपरीत ज्ञान से विपरीत मान्यता-)

(तर्ज - म्हारी माँ जिनवाणी...)
हे विपरीत ज्ञानी! विपरीत मान्यता तेरी ऽऽ...
सत्य को असत्य, असत्य को सत्य, माने है कुबुद्धि तेरी...2
अमूल्य को मूल्य, मूल्य को अमूल्य, बहुमूल्य को माने कोरी...2
हे विपरीत ज्ञानी!... (टेक)

मृगमरीचिका सम असत्य में भी, मान्यता तुमरी भारी...2
कस्तूरी मृग सम स्वनाभि कस्तूरी, बाहर ढूंढता कोरी...2 ... हे विपरीत...(1)

सोना चाँदी व मणि माणिक्य को, बहुमूल्य मान्यता तेरी...2
मिट्टी वायु व पानी के बिना, क्या काम आवे तेरे...2... हे विपरीत...(2)

सत्ता सम्पत्ति प्रसिद्धि बुद्धि को, बहुमूल्य मान्यता तेरी...2
सदाचार व शान्ति के बिना, ये क्या काम आवे तेरी...2... हे विपरीत...(3)

पढ़ाई डिग्री व नौकरी धन में, महत भाव है तेरा...2
संस्कार विवेक स्वास्थ्य कुटुम्ब बिना, इसका महत्त्व है कोरा...2... हे विपरीत...(4)

धन जन तन अभिमान में, स्वरूप भाव है तेरा...2
आत्मश्रद्धान आत्मज्ञान बिन, इनका महत्त्व है कोरा...2... हे विपरीत...(5)

धार्मिक पंथ ग्रन्थ पर्व में, आग्रह भाव है तेरा...2
शुचिता समता सत्यनिष्ठा बिन, महत्त्व शून्य है सारा...2... हे विपरीत...(6)

भोग-उपभोग वैभव को तू, सुख है मानता सारा...2
ज्ञानानन्द आत्म वैभव समक्ष, तुच्छ है ये सुख सारा...2... हे विपरीत...(7)

संसार वर्द्धक धन जन को तू, मानता सबसे प्यारा...2

आत्म सवंर्धक गुरु ज्ञान तो, अनावश्यक सदा तेरा...2... हे विपरीत...(8)

प्रतिकूल त्यागो अनुकूल चलो, पाओगे सत्य व शान्ति...2
'कनकनन्दी' तो भावना भाये, होवें है विश्व में शान्ति...2... हे विपरीत...(9)

धर्म शून्य धर्माचार

(तर्ज - 1. आओ बच्चों तुम्हे दिखाएँ... 2. धर्म से हम नहीं रख सके वास्ता)

धर्म से सम्बन्ध नहीं है भाई, छल कपट आडम्बर का
बाह्य दिखावा करके न बनता, कोई सच्चा धर्मी महान्
जानो सच्चा धर्म... जय हो सत्यधर्म...।।टेक।।

धर्म न होता केवल ढोंग से, पूजा-पाठ नाम जप से
धर्म तो होता पवित्र भाव व प्राणी मात्र के दया से
किन्तु धर्म के नाम पर किया, कुभाव व जीव संहार
बाह्य दिखावा करके न बनता, कोई सच्चा धर्मी महान्... जानो सच्चाधर्म(1)

धर्म ग्रन्थ पढ़कर भी किया, कंठस्थ व वाद विवाद
पर उपदेशी बना स्वयं भी, कभी न किया आत्म संवाद
तो भी स्वयं को ज्ञानी मानकर, अहंकार का किया विस्तार
बाह्य दिखावा करके न बनता, कोई सच्चा धर्मी महान्... जानो सच्चाधर्म(2)

पर्व व्रत दान है करता, उपवास उत्सव त्यौहार
ठाठ बाट में राज पाट में, जुलुस निकाले भीड़ अपार
तथापि शान्ति समता न मन में, करता कलह क्रूर आचार
बाह्य दिखावा करके न बनता, कोई सच्चा धर्मी महान्... जानो सच्चाधर्म(3)+

ईश्वर प्रभु की चर्चा करता, चाह करता धन-मान की
धन से धर्म या धर्म से धन की मांग करता है भोग की
पारमार्थिक शून्य भाव से, परिभ्रमण होता संसार
बाह्य दिखावा करके न बनता, कोई सच्चा धर्मी महान्... जानो सच्चाधर्म(4)

दुनियाँ की विचित्रता

(तर्ज - दुनियाँ में रहना है तो काम करो प्यारे...)

दुनियाँ में रहते हुए साम्य रहो प्यारे,
शान्त रहो आगे बढो काम करो प्यारे
नहीं तो इस दुनियाँ में शान्ति न मिलेगी
खाना पीना सोना में अशान्ति देगी ।।टेक।।

गिरगिट आक्टोपस के सम है दुनियाँ
क्षण क्षण बदलने में सक्षम है दुनियाँ
चित पट दोनों को माने ये दुनियाँ
मरने जीने दोनों ही न देती ये दुनियाँ... (1)

मच्छर सम गुन गुनाये (पैर पड़े) रोग भी देती है
जिन्दा में कष्ट देती मरने पे रोती है
विपत्ति में अपमान, सम्पत्ति में ईर्ष्या भी
थन से दूध पीये जोंक सम दुनियाँ भी... (2)

तीर्थेश बुद्ध ईसा को मारे भी पूजे भी
अपनी ही सन्तान को गर्भ में मारे भी
राम की पूजा करे रावण सम क्रिया भी
'कनकनन्दी' निस्पृह रहे ऐसी दुनियाँ भी... (3)

क्यों करो है ढोंगाचार?

(राग - 1. बस्ती बस्ती पर्वत पर्वत... 2. जैन धर्म के हीरे मोती...)

यदि करना है विपरीत काम, क्यों करो है ढोंगाचार...2
घड़ियाली आँसू बहाये नयने, करणी तुम्हारा क्रूराचार... (टेक/स्थायी)...

ग्रन्थ भी पढ़ों भाव न धरो, न करो तुम सदाचार
धर्म भी करो पावन न बनों, नहीं है तुममें पवित्राचार... (1)
मन्दिर जाओं गप्पे लगाओं, फैशन करते दुष्टाचार/(पापाचार)

दर्शन कम प्रदर्शन भारी, करते हो तुम मायाचार... (2)
पूज्य गुण प्राप्ति हेतु न पूजा पन्थ मत (का) बाह्याड़म्बर
निन्दा चुगली ईर्ष्या-द्वेष भी मोक्षमार्ग से बाह्याचार... (3)
तीर्थ यात्रा का बहाना बनाकर, करते हो तुम मनोरञ्जन
फैशन-व्यसन पिकनिक करते, किन्तु न करते मनमञ्जन... (4)
धर्म कार्य के अध्यक्ष बनो, बनो तुम है पदाधिकारी
दया दान सेवा कुछ न करो, बनते हो तुम शासनकारी... (5)
पर्व उपवास रूढि पालते, पालो नहीं है नैतिकाचार
सहज सरल भाव न रखते, नही पालते समताचार... (6)
पढ़ाई करो आधुनिक बनो, नहीं है तुममें आधुनिक ज्ञान
बगुला समान सफेद पोष, अन्तरंग में है कुटिलाचार/(धूर्ताचार)... (7)
नेता भी बनो भाषण करो, नहीं है तुममें सदाचार
रक्षक बनकर भक्षक बनो, राष्ट्र द्रोहात्मक भ्रष्टाचार... (8)
डिग्री प्राप्त कर नौकर बनो, चाकर बनकर नौकर शाह
काम न करो शोषण करो, भ्रष्टाचार में शाहन शाह... (9)
धार्मिक बनो दिल न कोमल, गुरु गुणी जने नहीं आदर
सर्वजीव में आत्मा भी मानो, तो भी उनसे क्रूराचार... (10)
सभ्य भी बनो शिक्षित बनो सेवा न करो है बुजुर्गजन
माता पिता के भी आदर न करो, सभ्य आचरण से हो अज्जान... (11)
'कनकनन्दी' का आह्वान सुनो, त्याग करो है ढोंगाचार
सरल सहज पावन बनो, जिससे पाओगे शान्ति अपार... (12)

मानव के महान् होने पर...!?

(तर्ज - रिमझिम बरसता सावन होगा...)

जब ये मानव महान् होगा, आध्यात्मिकमय जीवन होगा
मानव जाति का ज्ञान भी होगा, गौरव आश्चर्य दुःख भी होगा।। (टेक)

गौरव होगा महामानव प्रति, महान् लक्ष्य व कर्त्तव्य प्रति।
उच्च आदर्श व पवित्र वृत्ति, सत्य समता व त्याग प्रवृत्ति।।... (1)
आश्चर्य व दुःख उसे भी होगा, जब दुष्टों का ज्ञान करेगा।
विवश होकर वह सोचेगा, दुर्जन वृत्ति वह खोजेगा।।... (2)
दुर्जनों की दुष्ट विचित्र वृत्ति, मच्छर जोंक व सर्प की कृति (दृष्टि)।
दुर्जन मच्छरों का होता स्वभाव, सज्जनों को भी डंक लगाये।।...(3)
जोंक के समान होता स्वभाव, दुर्गुण ग्रहण का होता है भाव।
दूध को विष सम बनाये सर्प, सज्जनों को भी नाशे दुष्ट।।... (4)
दुष्टों की होती दुष्ट प्रवृत्ति, धर्म कर्म राजनीति प्रभृति।
मन वच काय तन की वृत्ति, सदा ही होती है राक्षस वृत्ति।।... (5)
धर्म में भी करता है पापाचार, भेद-भावयुक्त भ्रष्टाचार।
युद्ध महायुद्ध आतंकवाद, ईर्ष्या-द्वेष पूर्ण क्रूर आचार।।... (6)
बलिप्रथा व मिथ्या आचार, मांस भक्षण सुरापान।
धन जन मान का आड़म्बर, प्रलोभन भय व कामाचार।।... (7)
इत्यादि अनर्थ करता धर्म में, तथाहि राजनीति आदि कार्य में।
मानव जब है महान् बनता, तब ही यह सब अनर्थ लगता।।... (8)
क्षुद्रता में जब मानव होता, क्षुद्र कार्य ही महान् लगता।
अन्धकारमय जब भी होगा, द्रव्य आदि का दर्शन होगा।।... (9)
यथा अन्धकार दूर हो जाता, प्रकाश में द्रव्यदर्शन होता।
तथा आत्मिक प्रकाश होता, सत्य असत्य का ज्ञान भी होता।।... (10)
'कनकनन्दी' सदा भावना भाये, आध्यात्मिकमय सब हो जाये।
समतामय सब जीवन जीयें, कर्मों को नाशे मोक्ष को पायें।।... (11)

महान् बनने के लक्षण

(तर्ज - आत्मशक्ति से ओतप्रोत...)

महान् लक्ष्य भाव कर्त्तव्य से, होता है जीव महान् रे।

धन जन मान भोग-विलास से, न होता कोई महान् है।। (टेक)
जीव है चेतन अचेतन धन, धन से नहीं महान् रे।
धनादि त्याग से महान् होते हैं, तीर्थंकर साधुजन रे।। महान्... (1)
धनादि निमित्त होता है अन्याय, अत्याचार पापाचार है।
अन्याय अर्जित अन्याय कारक, धन से न बड़ा नर रे।। महान्... (2)
स्वार्थ से प्रेरित स्वार्थ के कारक, जन से न बड़ा नर रे।
भेड़ चाल व भेड़ियाचाल सम, होते हैं स्वार्थान्ध नर रे।। महान्... (3)
मान मद्य सम नीच कर्म करे, अष्टधा मद के रूप रे।
जाति कुल, रूप, ज्ञान, तप, बल, आदि मान के स्वरूप रे।। महान्...(4)
मद्य से भी महामद उत्पादक, पापाचार के जनक रे।
ऐसा मद को करे जो मानव, न होता श्रेष्ठ जनक रे।। महान्... (5)
भोग-विलास में रत जो मानव, वह है इन्द्रियदास रे।
दास कभी भी प्रभु न होता, यह है त्रिकाल सत्य रे।। महान्... (6)
महान् लक्ष्य भाव कर्त्तव्य से, जीवन होता पावन है।
पावन जन ही महान् होते हैं, अन्य हैं अधम जन रे।। महान्... (7)
पावन को जो नवधा माने हैं, वे भी न बनते पावन हैं।
अधम को जो नवधा माने हैं, वे भी बनते अधम हैं।। महान्... (8)

महापुरुषों से मानव जाति महान अन्यथा दानव

(तर्ज - जय हनुमान ज्ञान...)

जय जय महापुरुष हो महान्, तुम्हीं ही हो सर्व गुणों की खान।
उदारता है तुम्हारी पहचान, नम्रता तुम्हारी जग में शान।।
सत्यनिष्ठा है तुम्हारा प्राण, गुणग्राहकता तुम्हारा मान।
अपना पराया नहीं तुम्हारा, वसुधैव है कुटुम्ब तुम्हारा।।
मन वच काय से सरल तुम्हीं हो, कूट-कपट से रहित तुम्हीं हो।
क्षमा में तुम्ही तो धरती समान, मृदुता में नवनीत समान।।

शुचिता में पंकज सम तुम हो, दुर्जन के मध्य में निर्लिप्त तुम हो।
संयम रूपी कवच के धारी, सर्व पापों से तुम अविकारी।।
तप त्याग में वृक्ष समान, कष्ट सहन और फल प्रदान।
आकिंचन्य में नभ समान, निर्लिप्त भाव से सबसे महान्।।
तुम से जन्में ज्ञान-विज्ञान, भाषा संस्कृति संस्कार महान्।
कला व साहित्य संगीत शिक्षा, तुमने पढ़ायी जीवों की रक्षा।।
सब ज्ञानों में महाविज्ञान, तुमसे जन्मा आध्यात्म ज्ञान।
तुम ही जग के सच्चे हितकर, तुम बिना ये जग है तमकर।।
बाहर में तुम मानव शरीरा, अन्तर में तुम दिव्य शरीरा।
तव मार्ग में जो मानव चले, सो ही सच्चा नर भूतले।।
अन्यथा सब हैं मानव दानव, शरीर मानव क्रिया में दानव।

सब न होते महान् या दुर्जन

(तर्ज - दुःख से घबराओ...) (श्रीपाल चरित्र)

सत्य शिव सुन्दर है सभी में, सबकी अपनी शान रे। सबकी...
अन्यथा सब हैं शव के समान, शव न शोभनहार रे।। शव... (टेक)
आलिशान महलों में रहने वाले, सब न होते महान् रे...2
पर्णकुटी में रहने वाले, सब न होते नादान रे।।...2 सत्य... (1)
पुस्तक व ग्रंथ पढ़ने वाले, सब न होते सुज्ञानी रे...2
अंगूठा छाप लगाने वाले, सब न होते कुज्ञानी रे।।...2 सत्य... (2)
महानगर में रहने वाले, सभी न होते सुसभ्य रे...2
ग्राम पल्ली में रहने वाले, सभी न होते असभ्य रे।।...2 सत्य... (3)
धार्मिक-क्रिया करने वाले, सभी न होते सुधर्मी रे...2
बाह्य-क्रिया न करने वाले, सभी न होते अधर्मी रे।।...2 सत्य... (4)
सत्ता-सम्पत्ति सहित वाले, सभी न होते सुखी रे...2
सत्ता-सम्पत्ति रहित वाले, सभी न होते दुःखी रे।।...2 सत्य... (5)

शरीर से श्रम करने वाले, सभी न होते हीन रे...2
शरीर श्रम न करने वाले, होते क्या? सब श्रीमान् रे।।...2 सत्य...(6)
दूसरों से सेवा कराने वाले, सभी न होते महान् रे...2
दूसरों की सेवा करने वाले, वे नहीं होते दास रे।।...2 सत्य... (7)
प्रसिद्धि पूजा सहित वाले, सभी न होते सुगुणी रे...2
प्रसिद्धि पूजा रहित वाले, होते सभी न दुर्गुणी रे।।...2 सत्य... (8)
परोपदेश करने वाले, सभी न होते पवित्र रे...2
उपदेश न करने वाले, सभी न होते पतित रे।।...2 सत्य... (9)
सुन्दर देह सहित वाले, होते सभी क्या? सुमन रे...2
सुन्दर देह रहित वाले, होती सभी क्या? कुमन रे।।...2 सत्य...(10)

दोहाः-

"कनकनंदी" ने अनुभव से, जो पाया सो कहा...2
विश्वकल्याण के निमित्त से, लिपि निबद्ध है किया।।...2 सत्य... (11)

"खोटे छोटे लक्ष्यधारी अनुदारी"

(तर्ज - ऊँचे ऊँचे शिखरो वाला है...)

खोटे-छोटे लक्ष्यधारी हैं, ये अनुदार जन रे।
ये अनुदार जन रे, अज्ञानी जन रे। खोटे-छोटे...
सच्चे धर्म को नहीं अपनाते, रूढ़ि को ही सदा पीटते।
लकीर के फकीर वाले हैं... खोटे-छोटे...
सत्य-तथ्य से अनभिज्ञ रहते, देखा-देखी धर्म पालते
अनुभव विहीन सदा जो रहते, कथनी करनी में अन्तर रखते।
कूट-कपट के धारी हैं... खोटे-छोटे...
बाह्य आड़म्बर बहुत जो करते, भावना बिना घटा-टोप जो धरते।
गर्जन-तर्जन बहुत हैं करते, प्रेम-शान्ति से रिक्त ये रहते।।
बहुरूपिया धारी हैं... खोटे-छोटे...
सच्चे धर्मी से द्वेष जो करते, उनका विरोध जो सदा ही करते।

फूट डालकर राज जो करते, स्वार्थ सिद्धि में धर्म को लगाते।।
क्रोध, मान, माया धारी हैं... खोटे-छोटे...
अन्ध श्रद्धा के धारी जो रहते, बलि प्रथा भी पालन करने
भेद-भाव जो सदा ही रखते, लड़ाई झगड़ा सदा ही करते
संकीर्ण भाव के धारी हैं... खोटे-छोटे...
निन्दा चुगली सदा ही करते, ईर्ष्या घृणा की खान ये रहते
अहंकार का पोषण करते, स्वर्ग मोक्ष का टिकट जो देते
उत्शृंखलता भाव धारी हैं... खोटे-छोटे...
ज्ञान-विज्ञान से रहित जो रहते, आध्यात्मिकता की हत्या करते
आधुनिकता से दूर जो रहते, चमत्कार से स्वार्थ साधते।
एकता के घोर बैरी हैं... खोटे-छोटे...
"कनकनन्दी" शुभ भावना भाये, रूढ़िवाद सब दूर भगायें।
उदारता को सब कोई पाये, आध्यात्मिकता में शान्ति पाये।
सच्चे-ऊँचे लक्ष्य धारी हैं... ये हैं उदार जन रे...

विज्ञान से भी महान् धर्म की उपयोगिता क्यों कम हो रही है?!

(रागः- हूँ स्वतन्त्र निश्चल निष्काम...) **विज्ञान-धर्म गान**

विज्ञान से है भौतिक ज्ञान... धर्म से भौतिक आत्मिक ज्ञान।
विज्ञान से है भौतिक सुख... धर्म से भौतिक आत्मिक सुख।
विज्ञान से ऐहिक सुख... धर्म से ऐहिक परलोक सुख।
विज्ञान से है सीमित ज्ञान... धर्म से अनन्त अक्षय ज्ञान।
विज्ञान से है मूर्तिक ज्ञान... धर्म से मूर्तिक अमूर्तिक ज्ञान।
विज्ञान है मानवकृत भौतिकरूप... धर्म है प्राकृतिक वस्तु स्वरूप।
विज्ञान होता है सादि 'व' सान्त... धर्म होता है अनादि अनन्त।
विज्ञान से होता भौतिक विकास... धर्म से होता सर्व विकास।

विज्ञान ग्राह्य तो बन रहा है... धर्म का प्रभाव घट रहा है।
इसी में कारण अनेक होते... अन्तरंग तथा बाह्य भी होते।
भाव उद्देश्य कर्म संस्कार... अन्तरंग कारण होते प्रवर।
बाह्य में साधन सुख सुविधा... उपयोगिता व प्रयोगधर्मिता।
भौतिकवादी मानव अधिक हो गया... उसके लिए विज्ञान साधन बन गया।
विज्ञान की उपयोगिता बढ़ गई... प्रयोगधर्मिता विज्ञान की बढ़ गई।
धर्म में आड़म्बर दिखावा बढ़ गया... पवित्र भाव तो गायब हो गया।
अध्यात्म तो धर्म में न रहा... धन जन मान का प्रभाव बढ़ गया।
भेद भाव कलह प्रवेश कर गया... कट्टर संकीर्ण स्वार्थ आ गया।
धर्म की उपयोगिता खतम हो गई... प्रयोगधर्मिता गायब हो गई।
श्रद्धायुक्त तर्क न रहा अभी..: आपाधापी का जीवन हो गया अभी।
समीक्षा-समन्वय धर्म में नहीं रहा... मनोरञ्जन का साधन बन गया।
भौतिक क्रिया-काण्ड धर्म हो गया... आत्म परिमार्जन गौण हो गया।
उपदेश का व्यापार चल रहा... धन जन मान का क्रय भी हो रहा।
धर्म में राजनीति-व्यापार पैठ गया... निष्पृह साधक का मूल्य भी घट गया।
भौतिक सुख का साधन बन गया... आत्मिक सुख का लक्ष्य भी न रहा।
धर्म का प्रभाव इसी से घट रहा... धर्मी के बिना प्रभाव कहाँ रहा?
दीपक जले बिना प्रकाश नहीं देता... धर्मी के बिना धर्म का भी तथा होता।
धर्म तो धारण करने योग्य होता... ढोंग व पाखण्ड से धर्म का नहीं नाता।
धर्म की धारणा में 'कनक' सदा रत... विश्व में धर्म फैले इसी के लिए रत।

संकल्प

वैश्विक लक्ष्य-साधना एवं सिद्धि

(तर्ज - अच्छा सिला दिया...)

'सत्यमेव जयते' का गान गायेंगे...2, 'परस्पर उपग्रहो' काम करेंगे।
'हित मित प्रिय' ही वचन बोलेंगे...2, 'सत्य शिव सुन्दरम्' ध्यान ध्यायेंगे।।(1)

विश्वशान्ति मंगलम्... जीवधर्म मंगलम्।। टेक
'सच्चिदानन्द रूप' हम बनेंगे...2, 'वसुधैव कुटुम्ब' का न्याय लायेंगे।
'उदार पुरुष' भी हम बनेंगे...2, 'वैश्विक शान्ति' को हम पायेंगे।। (2)

'उत्पाद व्यय ध्रौव्य' सूत्र मानेंगे...2, 'प्रगतिशील' होकर आगे बढ़ेंगे।
'आददीपो' बनकर ज्ञानी बनेंगे...2, 'ब्रह्माण्ड रहस्य' को हम जानेंगे।। (3)

'जीव और अजीव' का ज्ञान करेंगे...2, 'वीतराग विज्ञान' का भाव करेंगे।
'आत्म-परमात्म' का भेद जानेंगे...2, 'जीव के विकासवाद' ज्ञान करेंगे।।(4)

'तन मन आत्मा' को स्वस्थ्य करेंगे...2, 'साधना की सिद्धि' को हम वरेंगे।
क्रोध मान माया लोभ हम त्यागेंगे...2, 'समता व शान्ति' को हम पायेंगे।।(5)

कर्म को नाशकर सिद्ध बनेंगे...2, 'संसार चक्र' से हम बचेंगे।
अनन्त ज्ञान और सुख पायेंगे...2, 'अनन्त वीर्य' के स्वामी बनेंगे।। (6)

'कनकनन्दी' भी भावना धरे हैं...2, ये सब गुण मुझे भी वरे हैं।
गुणों के कारण गुणी मैं बनूँ...2, आडम्बर का भाव कभी न धरूँ।। (7)

धर्म रहित विज्ञान अन्धा, अवैज्ञानिक धर्म पंगु!

(तर्ज - 1. यमुना किनारे श्याम... 2. अच्छा सिला दिया...)

वैज्ञानिक प्रयोग तो किया भी करो, ब्रह्माण्ड के रहस्यों को खोजा भी करो
खोज बोध शोध को बढ़ाया करो, सत्यज्ञान प्राप्ति हेतु आगे ही बढ़ो
प्राप्त ज्ञान से विश्व कल्याण करो, विज्ञान की सीमा को बढ़ाते चलो...? स्थायी...

सापेक्ष सिद्धान्त तथा अणु सिद्धान्त, पर्यावरण रक्षा तथा जीव सुरक्षा;
शाकाहार करना तथा स्वास्थ्य विज्ञान, ब्रह्माण्डीय ज्ञान तथा मनोविज्ञान;
भौतिक ज्ञान तथा रसायन ज्ञान, जीव विज्ञान तथा जिनोम ज्ञान... (1)
यान वाहन व कम्प्यूटर ज्ञान, टी.वी. मोबाइल आदि सञ्चार ज्ञान;
इत्यादि शोध बोध आविष्कार से, विज्ञान का उपकार मानव जाति के;

पर्यावरण रक्षादि से प्राणी मात्र के, कार्यकारण सूत्र से सूक्ष्म दृष्टि के...(2)

बहुविध उपकार जीव मात्र के, संकीर्णता नाश बहुदृष्टि से;
विज्ञान ने सिखाया वैश्विक दृष्टि, कट्टरता के नाशक है विज्ञान दृष्टि;
इसलिए विज्ञान तो विकास कर रहा, सर्वमान्य विषय वो बन रहा... (3)

तथापि अनेक दोष विज्ञाने स्थित है, सार्वभौम सत्य से दूर ही स्थित है
अमूर्तिक अभौतिक का ज्ञान नहीं है, चैतन्य आत्मा का तो भान नहीं है
अनन्त अनादि का तो पता नहीं है, आत्मकल्याण का ठिकाना नहीं है...(4)

पुनःजन्म सिद्धान्त व कर्म सिद्धान्त, पुण्य पाप बन्ध मोक्ष आत्म सिद्धान्त;
इत्यादि महाज्ञान का नहीं है भान, इसलिए विज्ञान है अपूर्ण ज्ञान;
अनिर्णीत अपूर्ण व भौतिक ज्ञान, दुरुपयोग से अहित है ज्ञान/(जान)...(5)

विज्ञान से जायमान प्रदूषण से, ग्लोबल वार्मिंग व दिनचर्या से
यान वाहन से मरे अनेक जान हैं, अस्त्र शस्त्र से मारे असंख्य/(अनेक) जान हैं
अनेक रोगों का विकास इससे हुआ, वरदान व अभिशाप विज्ञान हुआ...(6)

अध्यात्म व विज्ञान के दोनों मेल से, विश्व का कल्याण होगा सच्चा दिल से
परस्पर मिलने से होंगे वरदान, विरोधी होने से नाशक निदान
धर्म के बिना विज्ञान अन्धा समान, विज्ञान के बिना धर्म पंगु समान...(7)

अवैज्ञानिक धर्म तो रूढ़ि समान, लकीर के फकीर अन्धश्रद्धा अज्ञान
संकीर्ण कट्टरता आतंकवाद, हिंसा बलि प्रथा भेद-भाव कुज्ञान
प्रतिशोध भाव युक्त युद्ध पिपासु, आक्रमण प्रेरक रक्त पिपासु... (8)

वैज्ञानिक धर्म इससे विपरीत जान, अहिंसा सत् अचौर्य विवेकवान्
क्षमा शुचिता उदार सहिष्णु जान, स्व-पर-विश्वकल्याणक करुणावान्
सतत प्रगतिशील समतावान्, पर्यावरण रक्षक आध्यात्म ज्ञान/(जान)...(9)

वैज्ञानिक धर्म हेतु करो प्रयास, दोनों के मिलन से विश्व विकास
विज्ञान भी भौतिक सीमा को त्यागो, धर्म भी कट्टरता भाव को त्यागें
दोनों ही परस्पर गुणों को जाने, 'कनकनन्दी' का आह्वान दोनों ही मानें...(10)

''अयथार्थ की चकाचौंध से छिपा हुआ यथार्थ''

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्थयापिहितं मुखम्।
तत्त्वं पूषन्नापावृणु सत्यधर्माय दृष्टये ।। 15 ।। ईशा.

इस उपनिषद् के श्लोक में अनेक रहस्य अन्तर्निहित हैं। इसका एक रस्यात्मक अर्थ यह भी ध्वनित होता है कि सुवर्ण रूपी पात्र से सत्य का मुख ढका हुआ है। अतः सत्य-धर्म के दर्शन के लिए उस ढक्कन को निकालो।

इसका भावार्थ यह है कि बाह्य आवरण से यथार्थता आवृत्त रहती है। निरावरण सत्य/ नग्न सत्य/ यथार्थ सत्य का दर्शन, ज्ञान तथा उपलब्धि तब तक नहीं होगी जब तक आवरण रहेगा। यह आवरण अनेक प्रकार के हैं। यथा- मोह, अज्ञान, क्रोध, मान, माया, लोभ, काम, भय, घृणा, मिथ्या-परंपरा, रूढ़िवाद, पंथवाद, पक्षपात, पूर्वाग्रह, हठाग्रह, संकीर्णता आदि।

जिस प्रकार भगवान् की मूर्ति बहुमूल्य सुवर्ण के पात्र से ढँकी हुई है तो मूर्ति का दर्शन नहीं होता, उसी प्रकार प्राचीन या बहुमूल्य परंपरा, पक्षपातादि से आवृत्त सत्य का दर्शन नहीं होता है। भगवान् की मूर्ति के दर्शन का इच्छुक जिस प्रकार सुवर्ण के पात्र को हटाकर मूर्ति का दर्शन करता है उसी प्रकार सत्य-ग्राही भी सत्य के ऊपर पड़े हुए समस्त आवरण को हटाने के लिए सतत प्रयत्नशील होता है। क्योंकि सत्य की उपलब्धि ही सर्वोत्तम/अतुलनीय/अमूल्य उपलब्धि है। सत्य के दर्शन के बाद और कोई दर्शन अवशेष नहीं रहता है, इसके ज्ञान के होने पर और कुछ ज्ञान शेष नहीं रहता है, इसकी उपलब्धि के बाद और कोई उपलब्धि शेष नहीं रहती। कारण कि सत्य में ही सर्व निहित है, सत्य ही सर्वव्यापी है, सत्य ही परमेश्वर है, सत्य ही विश्व रूप है।

उपर्युक्त श्लोक के कर्त्ता ने सत्य को सुवर्ण के पात्र से आवृत्त कहा है। इसका भावार्थ यह है कि सत्य के ऊपर पड़ा हुआ रूढ़िवाद आदि आवरण कितना भी मूल्यवान हो, सुन्दर हो, चमकीला हो तथापि उसका मूल्य सत्य के सामने नगण्य है, हेय है, मूल्यहीन है त्यजनीय है। यह सत्य के ऊपर आवरण आत्मा, धर्म, समाज, परंपरा, इतिहासादि सब में व्याप्त है। कुछ

उदाहरण नीचे प्रस्तुत कर रहा हूँ।

यथार्थ एवं परम्परा

एक बार एक विवाह के अवसर पर एक बिल्ली आकर बार-बार कार्य में विघ्न कर रही थी। इसलिए गृहस्वामी ने बिल्ली को विवाह मण्डप के एक खंभे से बाँध दिया। कुछ वर्ष के बाद उस परिवार में एक विवाह हुआ। फेरे पड़ने का समय होने पर पंडित ने कहा वधू-वर को फेरों के लिए ले आओ। उस समय एक महिला बोलती है- पंडितजी! अभी तक एक भी बिल्ली पकड़ में नहीं आई है। जब तक एक बिल्ली विवाह मण्डप में बाँध नहीं दी जायेगी तब तक वर-वधू के फेरे नहीं पड़ सकते हैं। क्योंकि हमारे परिवार की यह परंपरा है। मेरा जब विवाह हुआ था मेरी सास ने भी बिल्ली को बाँधा था। इस प्रकार यथार्थ कुछ और रहता है और परंपरा और कुछ हो जाती है। इस विषय को - स्पष्ट करने के लिए एक और उदाहरण प्रस्तुत कर रहा हूँ।

एक दिन एक नई बहू को उसकी सास बोलती है- "बेटी इस कमरे को साफ करके इसका कचरा मनुष्य को देखकर बाहर फेंकना।" बहू के बहुत देरी तक साफ कर नहीं आने के कारण सास पूछती है- "बेटी इतनी देरी तक क्या रूम साफ नहीं हुआ ?" बहू बोलती है- "माताजी रूम तो बहुत पहले ही साफ हो गया है। परन्तु अभी तक कोई बच्चा तक नहीं आया है। बड़े मनुष्य की बात तो दूर है।" मैं कब से देख रही हूँ कि कोई आवे और उसके ऊपर कचरा फेंककर आऊँ।" सास का कहना था कि कचरा उस समय फेंकना है जिस समय कोई मनुष्य न हो। परन्तु बहू इससे विपरीत समझी कि कचरा मनुष्य के ऊपर फेंकना है। इसी प्रकार महापुरुष कुछ कहते हैं तो सुनने वाले और कुछ समझते हैं। धार्मिक परम्परादि में प्रायः ऐसी ही परिस्थितियाँ होती हैं। इन विपरीत परिस्थितियों को दूर करना केवल आत्म-ज्योति, पवित्रभावना से ही संभव है। इसको समझाने के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत है।

एक दिन एक सास बहू को बोलती है- बेटी! मैं अभी दूसरों के घर जा रही हूँ वापस आने में देरी होगी। तब तक रात पड़ जाएगी। तुमको सावधानी रखनी है कि घर में अंधेरा नहीं हो।" ऐसा कहकर सास बाहर चली जाती है।

कुछ समय के बाद संध्या हो जाती है जिसके कारण अंधेरा होने लगा। बहू अंधेरे को सम्बोधित करते हुए कहती है- हे अंधेरा! मेरी सास की आज्ञा है कि हमारे घर में तुम प्रवेश मत करना। तथापि अंधेरा फैलने लगा। बहू घर में अंधेरा प्रवेश नहीं करे इस उद्देश्य से दरवाजे एवं खिड़कियाँ बंध कर देती है। जिसके कारण घर में अधिक अँधेरा हो जाता है। इससे बहू नाराज होकर लाठी लेकर अँधेरे को पीटने लगती है। फिर भी अँधेरा पहले से अधिक घर में फैल गया। कुछ समय के बाद उसकी सास घर वापस आती है। घर में आकर देखती है कि घर अंधेरे से भरा हुआ है। सास पूछती है- "बहु रानी! मैंने बताया था कि घर में अंधेरा नहीं होना चाहिए। परन्तु घर में तो अन्धेरा फैला हुआ है। यह क्यों ?" बहू बोलती है "माताजी! मैंने तो बहुत कोशिश की परन्तु ढीट अंधेरा एक भी नहीं माना। पहले मैंने अंधेरे को मना किया फिर जब नहीं माना मैंने घर के सम्पूर्ण दरवाजे व खिड़कियाँ बंद कर दी। तथापि अंधेरा घर में फैल गया। अंधेरे को दूर भगाने के लिए लाठी से खूब मारा तथा कई लाठियाँ टूट गईं फिर भी अंधेरा घर में फैल गया। यह सुनकर सास बोलती है- एक माचिस व एक दीपक ले आओ। बहु माचिस एवं दीपक लाती है। सास दीपक जलाती है। दीपक जलने से अन्धेरा दूर हो जाता है। यह देखकर बहू आनन्द एवं आश्चर्य से गद्गद् हो जाती है। सास समझाते हुए बोलती है- बेटी! अन्धेरे को अनुनय-विनय या मार-पीट करके दूर नहीं किया जा सकता है। उसे तो केवल प्रकाश से ही दूर किया जा सकता है। इसी प्रकार असत्य, अज्ञान, मोह, कषाय, भेदभाव, मिथ्यापरंपरादि अन्धकार को सत्य विश्वास, सत्य विज्ञान, सत्य आचरण रूपी प्रकाश से दूर कर सकते हैं। इसके लिए सतत-सजग प्रयत्न तथा सत् पुरुषों की सहायता की आवश्यकता है। उपनिषद् में कहा भी है-

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत। (कठो. 14)
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्ग पथस्तत्कवयो वदन्ति।।

हे मनुष्य! तुम अनन्तकाल से अनेक योनियों में अज्ञान निद्रा में सो रहे हो। अब तुम्हें महान् भाग्य उदय से अत्यन्त दुर्लभ एवं श्रेष्ठ मनुष्य जन्म मिला है। इस जन्म को प्राप्त कर आलस्य त्यागकर सत्य को प्राप्त करने के लिए

शीघ्र सावधान हो जाओ। इसलिए तुम मोह-अज्ञानं आदि निद्रा को त्याग कर सत्यरूपी प्रकाश में उठो! सत्य को प्राप्त करने के लिए जाग्रत हो जाओ! सत्य उपासक श्रेष्ठ पुरुषों के पास जाकर सत्य के बारे में ज्ञान प्राप्त कर लो! सबको जानने वाले महाज्ञानी उस सत्य ज्ञान प्राप्त करने के मार्ग को छूरे की तीक्ष्ण की हुई धार के सदृश्य अत्यन्त पैनी है, दुर्गम है।

वर्षा का पानी जिस प्रकार स्वच्छ होने पर भी जब वर्षा का पानी जमीन पर गिरता है तो जमीन के विभिन्न रंग, तत्त्व, गंदगी पानी में मिल जाती है तब पानी गंदा हो जाता है, अस्वच्छ हो जाता है व विभिन्न हो जाता है। उसी प्रकार सत्य भी स्वयमेव पवित्र एवं स्वच्छ होते हुए भी मोह-अज्ञान, मिथ्या, परम्परा आदि से मिश्रित होकर दूषित हो जाता है। यह दूषितपन कुछ धर्म के नाम पर है तो कुछ समाज के नाम पर है तो कुछ परम्परा के नाम पर है।

धार्मिक परम्परा एवं विज्ञान

कुछ उदाहरण नीचे प्रस्तुत करके उपर्युक्त विषय को स्पष्ट कर रहे हैं। कुछ लोग तुलसी को देवी मानकर घर के आंगन में उसे लगाते हैं एवं उसकी पूजा करते हैं। इसका वैज्ञानिक कारण है कि तुलसी एक बहु औषधीय वृक्ष है। इससे प्रदूषण भी दूर होता है। जहाँ तुलसी का पेड़ होता है वहाँ विषाक्त रोगाणु, जीवाणु मच्छर आदि नहीं होते हैं। वैज्ञानिक दृष्टि से शोध हुई है कि तुलसी का वृक्ष दिन को एवं रात को भी प्राणवायु (ऑक्सीजन) त्याग करता है जिससे मनुष्य को पर्याप्त प्राणवायु प्राप्त होती है। इन सब कारणों से तुलसी को घर के पास लगाते हैं एवं उसकी सुरक्षा की दृष्टि से उसकी देखभाल भी की जाती है। इसी प्रकार अन्यान्य वृक्षों के लिए यथा योग्य जान लेना चाहिए। कुछ व्यक्ति नदी को देवी मानकर उसकी पूजा करते हैं। उस में स्नान करने से धर्म होता है ऐसा मानते हैं। नदी को तीर्थ मानते हैं। इसका कारण यह है कि प्रवाहित स्वच्छ जल की नदी में स्नान करने से शरीर की थकान, गरमी, गन्दगी दूर होती है। इससे शरीर स्वच्छ, शीतल हो जाता है जिससे मन के शान्त होने की संभावना है। जो नदी विशेष पर्व ह्रद आदि से निकलती है उसमें कुछ विशेषता भी आ जाती है। जैसा कि गंगा नदी हिमालय से निकलने के

कारण उसमें हिमालय की विभिन्न औषधियों के गुण आ जाते हैं। हिमालय का बर्फ पिघलकर भी गंगा में आता है। बर्फ में शीतलता होने से और प्राकृतिक बर्फ होने से उसमें रोगाणु, जीवाणु शीघ्र अधिक मात्रा में उत्पन्न नहीं होते हैं। इसलिए स्वच्छ गंगा का पानी शीघ्र सड़ता नहीं है, उसमें अधिक कीड़े-उत्पन्न नहीं होते हैं। इसलिए गंगा को अधिक पवित्र मानते हैं। किन्तु केवल नदी-स्नान से आत्मा पवित्र नहीं होती। यदि ऐसा होता तो नदी में जन्म लेने वाले, रहने वाले सब पापी जलचर जीव धर्मात्मा हो जाते।

विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों में विभिन्न तीर्थ एवं पर्व होते हैं। प्रत्येक तीर्थ एवं पर्व के पीछे कुछ महापुरुष, आध्यात्म पुरुष के आदर्श जुड़े हुए होते हैं। उस तीर्थयात्रा में विभिन्न स्नान की भाषा, संस्कृति, सभ्यता, ज्ञान-विज्ञान, इतिहास, पुराण का ज्ञान होता है। विभिन्न व्यक्तियों से मित्रता होती है, संगठन बढ़ता है। कुछ ज्ञानी साधु-संत तीर्थयात्रा के अवसर पर उपदेशादि के माध्यम से सदाचार, अहिंसा, प्राणी-मैत्री का प्रचार-प्रसार करते हैं। प्रायः तीर्थ-यात्रा पैदल होती है। विशेष यात्रा तो नंगे पैर होती है। पैदल यात्रा से शारीरिक व्यायाम होता है, जिससे स्वास्थ्य अच्छा होता है, शरीर बलशाली बनता है। नंगे पैर की यात्रा से प्राकृतिक एक्यूप्रेशर चिकित्सा हो जाती है, पृथ्वी से ऊर्जा प्राप्त होती है। तीर्थ में एवं पर्व में अधिक व्यक्ति एकत्रित होकर कार्य करते हैं। वहाँ के विभिन्न धार्मिक-कार्यक्रम के कारण नई चेतना, जागृति, संगठन, मित्रता धार्मिकता, प्रभावना बढ़ती है। परन्तु प्रयोगिक अनुभव से ज्ञात होता है कि तीर्थ-यात्रा पर्व, महोत्सवादि से उपर्युक्त उत्तम गुणों की उपलब्धि तो कम होती है परन्तु भीड़-भाड़ लूट-मार, चोरी, डकैती, दिखावा, फैशन, बलात्कार, अनावश्यक खर्च, झगड़ा, कलह तनाव आदि अधिक होता है।

धर्म एवं धर्मान्धता

जो जीवों को विभिन्न शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक दुःखों से निवृत्त कराकर उत्तम सुख प्रदान करे उसे धर्म कहते हैं। अर्थात् जिसके द्वारा जीवों को उत्तम सुख प्राप्त हो उसे धर्म कहते हैं। धर्म के विभिन्न रूप, गुण या अंग हैं। यथा सत् विश्वास, सच्चा ज्ञान, सदाचार, क्षमा, मृदुता, सरलता, परोपकार,

पवित्रता, निर्लोभता, संत्य, संयम, त्याग, ब्रह्मचर्य, तपस्या, धैर्य, दान, सहिष्णुता, उदारता, अहिंसा, अचौर्य, अपरिग्रह आदि। इन गुणों के कारण ही जीव महापुरुष, धर्मात्मा, संत-साधु महान्, महात्मा, भगवान् बनता है। परन्तु विश्व-पुराण, इतिहास से ज्ञात होता है कि धर्म के नाम पर ही अनेक युद्ध, द्वन्द्व, तनाव, फूट, पंथवाद, मतवाद, अन्ध परम्परा, संकीर्णता, कट्टरता, मूढ़ता, भेद-भाव, हिंसा, मनमुटाव, ईर्ष्या, घृणा, द्वेष आदि पनपे हैं।

राजतंत्र की आवश्यकता एवं उसका दुरुपयोग

दुर्बल प्रजा, राष्ट्र, नीति, कानून, स्त्री की सुरक्षा के लिए राजा की आवश्यकता हुई एवं उसकी नियुक्ति हुई। प्रजा को जो क्षति से रक्षा करे उसे क्षत्रिय कहते हैं। और उनमें जो श्रेष्ठ होता है उसे राजा कहते हैं। नीतियों में श्रेष्ठ नीति को राजनीति कहते हैं। परन्तु सुदीर्घ भूतकाल साक्षी है कि कुछ ही कम राजाओं को छोड़कर अधिकांश राजा दुर्बलों को सताने वाले, दूसरों के राष्ट्रों को लूटने वाले, नीति, कानून को विध्वंस करने वाले, स्त्रियों पर बलात्कार करने वाले, स्वयं की सुरक्षा के लिए दूसरों को कष्ट देने वाले हुए हैं, अधिकांश राजाओं ने सुरा, सुन्दरी, शिकार, समर, संभोग आदि नीच कार्य में ही तन, मन, धन एवं समय को लगाया है। इसलिए अति प्राचीन सामाजिक/राष्ट्रीय संस्था होते हुए भी राजतंत्र अभी लोप-प्रायः है।

प्रजातंत्र की आवश्यकता एवं उसका विकृत रूप

प्रजा को स्वतंत्रता, सुख, समृद्धि प्रदान करने के लिए राजतंत्र को उखाड़ फेंका गया तथा लोकतंत्र, समाजवाद, साम्यवाद रूपी पौधों का रोपण किया गया। जिस उद्देश्य से यह वृक्षारोपण किया गया है। उस उद्देश्य रूपी पूर्ण फल को प्रदान करने में यह वृक्ष समर्थ नहीं हो रहा है। खेत को ही बाड़ खा रही है, उक्ति चरितार्थ हो रही है। प्रजा के रक्षक ही भक्षक बन रहे हैं, राष्ट्र का विकास करने वाले ही राष्ट्र का विनाश कर रहे हैं, देश का श्रेष्ठ करने वाले ही देश को भ्रष्ट कर रहे हैं। नागरिकों के पसीने के बदले खून देने वाले स्वयं तो पसीना तक नहीं देते परन्तु दूसरों का खून बहा रहे हैं। प्रजा के पास खाने के लिए रोटी नहीं, पहनने के लिए लंगोटी नहीं, रहने के लिए कुटी नहीं, परन्तु देश के नेता

विदेशी बैंकों में करोड़ों का धन जमा करते हैं, उनके कुछ मिनटों के प्रवास के लिए करोड़ों का खर्च होता है। यहाँ तक कि अलग से हजारों के खर्च से शौचालय बनता है।

सामाजिक संगठन एवं उसका विद्रूप

बहुत ही प्राचीन काल में मनुष्य प्रकृति की गोद में स्वतंत्र, निरापद, सुखमय जीवन बिताता था। जिसे भोग भूमि कहते हैं। उस समय में केवल मनुष्य ही नहीं परन्तु पशु-पक्षी-मनुष्य प्रेम से मिलकर प्रकृति की शीतल, सुखमय निरापद गोद में निवास करते थे। कालक्रम से प्रकृति में परिवर्तन हुआ। इसके फलस्वरूप पहले जो जीवनोपयोगी सामग्रियाँ पर्याप्त सुलभ थी वह कुछ कम हुई। इधर जीवों के स्वभाव में भी परिवर्तन हुआ। जीव पहले से धीरे-धीरे कुटिल, क्रूर, लोभी, हिंसक, आक्रामक, संकीर्ण, परपीड़क होने लगे। जिससे वे परस्पर को कष्ट देने लगे। इसलिए आत्मरक्षा के लिए अस्त्र-शस्त्रों का अविष्कार हुआ। मनुष्य घर बनाकर संगठित होकर रहने लगे। इससे परिवार, समाज, ग्राम, नगर, प्रदेश, देश आदि सत्ता में आये। परस्पर के सहयोग, संगठन से जीवन सुखमय हो इस आवश्यकता के कारण उपर्युक्त घर, परिवार, नगरादि का आविष्कार हुआ। परन्तु जिस उद्देश्य से इन संस्थाओं का गठन हुआ उस उद्देश्य को सम्पूर्ण रूप से पूरा करने में ये संस्थायें असमर्थ रही हैं पहले की छोटी-छोटी संस्थाएँ उत्तरोत्तर बनी हुई बड़ी-बड़ी संस्थाएँ मनुष्य को अधिक से अधिक कष्ट देने का कारण बनी हैं। ग्राम से नगर में अधिक असहकार, शोषण, भ्रष्टाचार, प्रदूषणादि पाये गये हैं। एक देश दूसरे देशों को अपना शत्रु मानता है। एक देश अन्य देश के ऊपर आक्रमण, युद्ध, शोषण, लूट, परतंत्र करता हुआ पाया जाता है। इसे ही प्रकारान्तर से दिग्विजय राज्य विस्तार, राजसूययज्ञ, मण्डलेश्वरत्व, अर्द्धचक्रवर्तीत्व, चक्रवर्तीत्व आदि नामों से महिमा मण्डित करते हैं।

वर्ण व्यवस्था एवं उसका विकार

जो ब्रह्म/आत्मा/धर्म को जानते, मानते और उसे प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील होते हैं उन्हें ब्राह्मण, जो दुर्बलों को क्षत/विपत्ति से रक्षा करते हैं

उन्हें क्षत्रिय, जो खेती, पशुपालन, व्यापार करके दूसरों का भरण/पोषण करते उसे वैश्य और जो सेवा धर्म को अपनायें उन्हें हरिजन (शूद्र) शब्द से सम्बोधित किया गया। ब्राह्मण का कार्य स्वयं ब्रह्म/सत्य/धर्म को प्राप्त करके उसका प्रचार-प्रसार करना है। इस दृष्टि से उत्कृष्ट ब्राह्मण गृहत्यागी, वीतरागी साधु-सन्त है। सामान्य ब्रह्मज्ञानी गृहाश्रमी है। इनके कारण विभिन्न ज्ञान-विज्ञान का प्रचार-प्रसार हुआ, शास्त्र लिखे गये, विभिन्न धार्मिक कार्यक्रम हुए। इन कार्यों में ब्राह्मणों के व्यस्त होने के कारण उनका भरण-पोषण अन्य गृहस्थ करते थे। इस कारण दान परंपरा प्रारम्भ हुई। ब्राह्मण सबसे गुणी होने के कारण उन्हें चारों वर्ण में उच्च स्थान मिला, उनको गुरु माना गया, उनका आदर-सत्कार हुआ, पूजा हुई, परन्तु काल-क्रम से जिसके पूर्वज ब्राह्मण थे वे भी ब्राह्मण थे वे भी ब्राह्मण हुए भले वे पापी, पतित, अज्ञानी, धूर्त, हिंसक, चोर, आलसी, जुआरी क्यों न हो? ऐसे व्यक्ति भी पूर्वोक्त ब्राह्मण के अधिकार को प्राप्त करना अपना अधिकार मानते हैं, स्वयं को योग्य मानते हैं।

जो शक्तिशाली क्षत्रिय दूसरों की रक्षा करने में व्यस्त होते थे, उनमें जो अधिक प्रभावशाली होता था उसे 'राजा' रूप में स्वीकार किया गया। वह 'राजा' प्रजा की सुरक्षा/व्यवस्था/समृद्धि में स्वयं को मनसा, वचसा, कर्मणा समर्पित करने के कारण उसकी सहायतार्थे एवं राज-परिवार की व्यवस्था के लिए प्रजा कर रूप से राजा को आर्थिक सहायता करती थी। परन्तु पूर्व वर्णित के अनुसार अधिकांश राजा प्रजा को लूटने वाले, पीड़ा देने वाले रक्षक के विपरीत भक्षक हुए।

ब्राह्मण राष्ट्र के ज्ञान तथा सदाचार के पुरोधा है तो क्षत्रिय सुरक्षा तंत्र है और वैश्य अर्थ-तंत्र को सुदृढ़ करने वाले होते हैं। आवश्यकता के अनुसार आर्थिक, सहायता पहुँचाना उनका कर्त्तव्य है। परन्तु अधिक ब्याज, मिलावट, अधिक माप-तोल, धोखा-धड़ी, घोटाला, भ्रष्टाचार, शोषण अधिक मूल्य बढ़ाने के लिए माल तो गुप्त रख करके राष्ट्र के अर्थ-तंत्र को रूग्ण एवं जर्जर करते हैं।

नीतिकारों ने कहा है कि ये सेवाधर्म अति गहन एवं दुष्कर है। जीवों की

सेवा भगवान् की सेवा है। सेवा से दूसरों कें दुःख, दुर्दशा रोग को दूर किया जाता है। सेवा से हृदय से घायल व्यक्ति के हृदय को शांत करके हृदय से लगाते हैं परन्तु सेवा करने वाले धीरे-धीरे पशु-वध, मद्यपान, अशिक्षा, डकैती, चोरी आदि नीचाचार को अपना वर्णगत धर्म मान लिए और दूसरे लोग भी उनसे घृणा करने लगे। इससे समाज को भेदभाव, कटुता, उच्च-नीच आदि अनुदार भावों ने ग्रस लिया। शरीर के शिर को ब्राह्मण, भुजाओं को क्षत्रिय, पेट को वैश्य एवं पैर को हरिजन (शूद्र) रूप से स्वीकार करने वाले अपने-अपने स्थान में उनका योगदान महत्त्वपूर्ण है। जिस प्रकार हम शरीर के उपर्युक्त किसी भी अंग की अवहेलना, असुरक्षा, क्षति नहीं करते हैं, किसी भी अंग में रोग होने पर उसकी चिकित्सा करते हैं उसी प्रकार समाज के चारों अंगों के लिए जानना चाहिए।

न्यायाधीश बना अन्यायाधीश

उपर्युक्त समाज-संस्था, शासन-तंत्र जिस प्रकार अस्तित्व में आये इसी प्रकार उसी प्रक्रिया से वैसे ही उद्देश्य को लेकर और भी एक संस्था उसके ही समकाल में अस्तित्त्व में आई। वह है न्याय-प्रक्रिया/दण्ड प्रक्रिया। जब मनुष्य (पशु-पक्षी भी) पवित्र, सुखद, जीवनोपयोगी पर्याप्त सामग्रियों को देने वाली प्रकृति की गोद में था तब उससे कोई भी ऐसा अपराध नहीं होता था जिसे सामाजिक दृष्टि से अपराध या दण्डनीय हो। इसलिए उस समय न्याय-प्रक्रिया थी दण्ड विधान नहीं था। कालक्रम से जब प्राकृतिक परिवर्तन के कारण जीवनोपयोगी सामग्रियाँ पर्याप्त उपलब्ध नहीं हुई तथा जीवों के स्वभाव में मलिनता आई तब उनसे अपराध होने लगे। अपराध न हो इस उद्देश्य से कुछ प्रबुद्ध लोगों ने न्याय तथा दण्ड प्रणाली का प्रयोग किया। कुलकर, मनु, राजा, मंत्री, पुरोहित, पंच आदि इस संस्था के प्रमुख होते हैं। इन्हें हम संक्षिप्ततः न्यायकर्ता/न्यायाधीश/दण्डनायक आदि शब्द से सम्बोधित करते हैं। यह प्रक्रिया चिकित्सा प्रणाली के समान अपराधों को दूर करना है।

जिस प्रकार दयालु, परोपकारी, चिकित्सक रोगी को विभिन्न कड़वी औषधियाँ पिलाता है उसके रोग ग्रस्त अंग-उपांग को काटता भी है। यह सब

रोगी को निरोगी बनाने के लिए करता है न कि रोगी को कष्ट देने के लिए करता है। उसी प्रकार न्यायधीश आदि के द्वारा दोषी को निर्दोष करने के लिए विभिन्न उपायों का आवलम्बन लिया जाता है। परन्तु प्रायोगिक अनुभव से पता चलता है और इसके लिए इतिहास भी साक्षी है कि न्यायिक प्रक्रिया से न्याय कम मिला है। परन्तु अन्याय का ही प्रसार-प्रचार ज्यादा हुआ है। वकील धन शोषण करने के लिए सत्य को जानता हुआ भी सत्य का पक्ष नहीं लेता है और उसका प्रतिपादन नहीं करता है। इसके कारण दस-बीस रूपयों के केस के लिए लाखों, करोड़ों रूपया खर्च हो जाता है और वर्षों केस के लिए दौड़-धूप करनी पड़ती है। कुछ तो केस पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलते हैं। पढ़ने में आया है कि एक केस 923 वर्षों तक चला। इससे गरीब और भी गरीब हो जाता है। निर्दोष भी मारा जाता है। इसलिए कष्ट सहन करने पर भी अनेक व्यक्ति न्यायालय का मुँख देखना भी नहीं चाहते हैं। न्यायाधीश भी सत्य को जानता हुआ भी साक्षी के अभाव से सत्य के पक्ष में न्याय नहीं दे सकता है। कितनी विडम्बना है कि स्वतंत्रत भारत में भी, भारत को परतंत्र करने वाले शासक द्वारा परतंत्र भारत के लिए जो कानून बना था वही कानून चल रहा है। रानी ऐन की मृत्यु पर बादशाह विलियम ने 1714 में शोक मनाने का आदेश दिया। अतः जज वकील काला चोगा पहनकर कचहरी जाने लगे। शोक की अवधि कुछ दिनों बाद समाप्त हो गई लेकिन सिले हुए कोट फिर भी वकील लोग कचहरी में पहनकर आते रहे, तब से यह प्रथा चल पड़ी। अंग्रेजी राज्य की नकल यहाँ भी हुई। हमारे यहाँ के वकील आज भी रानी ऐन का मृत्यु शोक मना रहे हैं। ऐसी सड़ी गली मृत परम्परा को ढ़ोने वाले क्या न्याय करेंगे?

दैनिक जीवन में अंधता

शरीर को स्वस्थ्य, सबल, कार्य-क्षम रखने के लिए भोजन, पानी, वस्त्र, औषधि, प्रसाधन-सामग्रियों की आवश्यकता होती है। स्वस्थ्य शरीर से धर्म, सदाचार, कर्त्तव्य-पालन, सेवा, परोपकारादि कार्य सुचारु रूप से होते हैं, इससे स्व-पर, इह लोक-परलोक समाज विश्व का कल्याण होता है। परन्तु व्यक्ति इन सब साधनों के कारण दूसरों को कष्ट देने के साथ-साथ भोजनादि

से प्राप्त शक्ति से भी दूसरों को कष्ट देता है। मांस, अण्डा, मछली, के लिए दूसरे जीवों की हत्या करता है, मद्यादि नशीली वस्तु सेवन करके स्व-पर को कष्ट देता है। बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू, पान-पराग, चाय, कॉफी आदि को शौक/आनन्द/स्फूर्ति के लिए सेवन करके शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक रूप से रुग्ण/जर्जरित होता है। शरीर से सर्दी, गरमी से सुरक्षा के लिए तथा लज्जा निवारण के लिए वस्त्र धारण किया जाता है। परन्तु फैशन रूपी मानसिक रोग से ग्रसित स्त्री-पुरुष बहुमूल्य वस्त्र परिधान करते हुए भी अर्ध-नग्न, अश्लील, असभ्य होते हैं। भारत ग्रीष्म प्रधान देश होने के कारण यहाँ के खान-पान, परिधान शीत-प्रधान देश से स्वाभाविक रूप से भिन्न होते हैं। किन्तु स्वयं को सभ्य, आधुनिक, शिक्षित मानने वाले, जताने वाले कुछ व्यक्ति भयंकर गरमी में भी काले कोट-पैंट, टाई, जूते पहनकर, कूलर, ए.सी. में बैठकर गरम-गरम चाय, कॉफी पियेंगे, बीड़ी-सिगरेट पियेंगे, साथ ही साथ कोकाकोला, फैंटा आदि शीतल पेय भी पियेंगे। तेल, हल्दी, मेहन्दी आदि प्रसाधन सामग्रियाँ अहिंसात्मक उपाय से प्राप्त किये जाते हैं। इसके सेवन से शरीर स्वस्थ्य सुन्दर बनता है। परन्तु अनेक साबुन, शैम्पू, सेंट, इत्र, नेलपॉलिश, लिपिस्टिक, स्नो-पाउडर अनेक जीवों को मारकर बनाये जाते हैं और विभिन्न रोग कारक भी होते हैं तथापि उसका सेवन अनेक व्यक्ति मूर्खता से करते हैं।

रक्षक बना भक्षक

पुलिस स्पेनिश भाषा का शब्द है। जिसका अलग-अलग अर्थ है POLICE'पी' अर्थात् विनम्रता, 'ओ' का अर्थ है उद्देश्य, 'एल' अर्थात् लीगल एडवाइजर, 'आई' अर्थात् इन्टेलिजेन्सी, 'सी' अर्थात् चेकिंग और 'ई' अर्थात् एनरजेटिक साहसी। पुलिस में इन छः गुणों का होना जरूरी है।

इंग्लैण्ड में रॉबर्ट पील ने मेट्रोपोलीटन पुलिस का निर्माण और सुधार किया। भारत में अंग्रेजों ने आंदोलनों को कुचलने के लिए पुलिस को रखा। अब भी वह प्रवृत्ति बनी हुई है। निहत्थी जनता पर लाठी-चार्ज और अश्रुगैस आम बात है।

काले चमड़े वाले भारतीय पुलिस भी दमनकारी गोरे चमड़े वाले अंग्रेजी पुलिस के समान अभी भी, बर्बर, क्रूर, असभ्य है। उनका हाथ हर क्षेत्र में फैला हुआ है। इनके बिना देश का कोई कार्य नहीं होता है। ये सर्वभक्षी, सर्वव्यापी, सर्वसत्तावान, सर्व कर्त्ता-धर्ता-हर्ता हैं। इनके बिना न चोरी-डकैती-होती है न चोर डकैत पकड़े जाते हैं। इनके बिना न कोई धार्मिक कार्य होते हैं और न ही वे धर्म को मानते हैं। सम्पूर्ण सुरक्षा का उत्तरदायित्व इनके ऊपर है, परन्तु समस्त असुरक्षा इनसे ही प्रायः होती है। जब तक न्यायाधीश दोषियों को दण्ड देने के लिए आज्ञा नहीं देता है तब तक इनका उत्तरदायित्व दोषी को केवल पकड़ना एवं सुरक्षित रूप से न्यायकर्ता के पास दोषी को पहुँचाना है, परन्तु दोषी या निर्दोषों को गाली देना, अपमानित करना, मारना, पीटना, इनका मानो पवित्र कर्त्तव्य हो गया है।

विज्ञान और उसका अंधकार पक्ष

विशेष ज्ञान/वीतराग ज्ञान/विधिवत् ज्ञान को विज्ञान कहते हैं। आधुनिक विज्ञान का विशेषतः विगत 300-400 वर्षों में विकास हुआ। इसकी प्रणाली है- 'किसी भी विषय का क्रमबद्ध व्यवस्थित अध्ययन'। इसका उद्देश्य है- 'जीवों को सुख समृद्धि पहुँचाना'। जेम्सवॉट (स्टीपन सेन) ने खान में काम करने वाले घोड़ों का दुःख दूर करने के लिए वाष्प इंजन का निर्माण किया था। अणुशक्ति को मानव कल्याण में लगाने के लिए आइन्स्टीन एवं उनके सहकर्मियों ने एटमबम बनाया था। सोनोग्राफी का निर्माण गर्भस्थ शिशुओं का परीक्षण करने के लिए हुआ था। इसी प्रकार प्रायः प्रत्येक वैज्ञानिक उपकरण का निर्माण जीवों के उपकार के लिए हुआ था, परन्तु वैज्ञानिक उपलब्धि का भी दुरुपयोग बहुत हुआ और हो रहा है। वैज्ञानिक उपलब्धियों के कारण मनुष्य यांत्रिक होता जा रहा है। स्वावलम्बन एवं शारीरिक श्रम को हीन दृष्टि से देख रहा है। इससे मनुष्य शारीरिक दृष्टि से दुर्बल, रोगी, निकम्मा होता जा रहा है। द्वितीय विश्वयुद्ध में अमेरिका ने हिरोशिमा एवं नागासाकी के ऊपर बम डालकर लाखों व्यक्तियों को भून डाला, लाखों व्यक्ति अपंग/विकलांग हो गये, अरबों की सम्पत्ति राख हो गई। उसके प्रभाव से अभी भी विकलांग सन्तानें जन्म ले

रही हैं। बम, विस्फोट अस्त्र-शस्त्र, रासायनिक अस्त्र-शस्त्र के कारण जीव जगत् संत्रस्त है। कारखाना, यान-वाहन के कारण वायु-प्रदूषण, शब्द-प्रदूषण, जल-प्रदूषण के कारण जीव-जगत् पल-पल मृत्यु का सामना कर रहा है। विषाक्त रासायनिक कीटनाशक औषधि, कृत्रिम खाद के कारण पृथ्वी भी विषाक्त हो रही है। जमीन उर्वराशक्ति से रहित हो रही है। फल, अनाज, वायु, जल विषाक्त एवं सत्त्वरहित हो रहा हैं। सोनोग्राफी से गर्भस्थ बच्चों का गर्भपात अधिक हो रहा है।

विज्ञान के कारण अन्धविश्वास, संकीर्णता, रूढ़िवाद, अनुदारता, धर्मान्धता, यज्ञ में पशुबलि, असमानता, बाल-विवाह, सतीदाह प्रथा, आदि मिथ्या-परंपरायें भी घटी हैं, ढोंगी, धर्मात्माओं का वर्चस्व कम हुआ है, भूत-प्रेत, टोना, टोटका का जोर जर्जर हो रहा है, जो कि शुभ लक्षण है, परन्तु सच्चे विज्ञान को नहीं जानने वाले वैज्ञानिक बाह्य चकाचौंध से इतने अन्धे हो जाते हैं कि वे नैतिकता, संस्कृति, सभ्यता अच्छी-सच्ची परंपरा को भी नहीं देख पाते हैं। जैसा कि कुछ वर्ष पहले जब डालडा (वनस्पति घी) का प्रचार हुआ तब लोग डालडा खाने वालों को आधुनिक, सभ्य एवं शिक्षित मानने लगे एवं शुद्ध देशी घी खाने वालों को प्राचीन पंथी, असभ्य, अशिक्षित मानने लगे। इस प्रकार हिंसात्मक, कृत्रिम, स्वास्थ्य के लिए हानिकारक साबुन, शैम्पू, क्रीम, नेलपॉलिश, लिपिस्टिक, टूथपेस्ट, पाउडर प्रयोग करने वाले सभ्य कहलाने लगे और प्राकृतिक, अहिंसक स्वास्थ्यप्रद तेल, मेहन्दी, हल्दी, शिकाकाई, मुलतानी मिट्टी, नीम आदि के दन्तवन (दातुन) आदि प्रयोग करने वालों को मूर्ख, गंवार मानने लगे। इसी प्रकार आधुनिकता का अन्धानुकरण करने वाले कुछ लोग सत्य, सदाचार, कर्त्तव्य, धर्म विज्ञान, आध्यात्मिकता के विरुद्ध चल रहे हैं।

अभिव्यक्ति एवं उसका विकृत रूप

अमेरिका के सातवें राष्ट्रपति ऐन्ड्रयू जैक्सन अपने कानूनी दस्तावेजों पर संक्षिप्त संकेत लिखते थे- ओ. (O) आर. (R) जिसका अर्थ होता था ऑर्डर रिकार्डेड। अंग्रेजी का आर चूंकी अंग्रेजी के 'के' (K) से मिलता जुलता

है। एक भारतीय सेना ओल्ड कियोपक अपने हस्ताक्षर (O.K.) किया करता था। दोनों चीजों का एक साथ मिलान हो गया कब कैसे हुआ पता नहीं।

आज कल O.K. का अर्थ All Correct सब ठीक है, से लगाते हैं। जिसप्रकार O.K. का अर्थ परिवर्तित होते-होते कुछ का कुछ हो गया, उसी प्रकार अन्य अनेक शब्दों में हुआ है। यथा शर्म, निकम्मा, पागल, लुच्चा आदि-आदि। 'शर्म' शब्द का प्रयोग संस्कृत भाषा में सुख अर्थ में हुआ है। यथा - ''धर्मः सर्व सुखाकरः''। अर्थात् धर्म सम्पूर्ण सुख के लिए कारण है, खान है। जो सम्पूर्ण द्रव्य कर्म, भावकर्म, नोकर्म से रहित हैं ऐसे सिद्ध भगवान् को निकम्मा अर्थात् निष्कर्मा कहते हैं। यथा- 'निकम्मा अट्ठगुणा' अर्थात् जो सम्पूर्ण कर्म से रहित है, एवं आठों गुणों से युक्त है उसे सिद्ध भगवान् कहते हैं। परन्तु जो आलसी है, अकर्मण्य है उसे सभी निकम्मा कहते हैं। 'पागल' जो पाप को गालन (प्रक्षालन) करें, नष्ट करे, वह पागल है अर्थात् साधु-सन्त। परन्तु अभी जो मानसिक रूप से विकलांग है और विक्षुब्ध है उसे पागल कहते हैं। 'लूंचा' अर्थात् जो दिगम्बर साधु व्रत की रक्षा के लिए, स्वावलम्बन के लिए अहिंसा के लिए, वैराग्य के लिए, हाथ से ही केशों का उत्पाटन करते हैं उसे लूंचन कहते हैं और जो लोंचन करता है वे सब केशलोंचक हैं, परन्तु अभी जो बदमाश, गुंडे होते हैं उन्हें लूंचा कहते हैं। मारवाड़ी भाषा में 'आप' को थारो बोलते हैं। यह शब्द प्राकृत एवं पाले के 'थोर' शब्द से निकला है। 'थोर' का अर्थ है- स्थविर। स्थविर का अर्थ है वृद्ध। जो ज्ञान से चारित्र से प्रबुद्ध हो उसे वृद्ध कहते हैं। अभी चिट्ठी (लेटर) को पत्र कहते हैं। वस्तुतः पत्र का अर्थ है वृक्ष के पत्ते। प्राचीन काल में ताडपत्र, भोजपत्र आदि में पत्र लिखा जाता था। इसलिए कागज में अभी भी जो चिट्ठी लिखी जाती है उसे पत्र कहते हैं। पहले लकड़ी में अक्षर उल्टे रूप में खोदे जाते थे। उसे कागज में दबाव देकर (प्रेस) पुस्तकादि छपाया जाता था। इसलिए अभी जो छपने का काम है या छपाने की मशीन को भी प्रेस कहते हैं।

उपसंहार

जिस प्रकार शब्द के उच्चारण, शब्दार्थ एवं भावार्थ में परिवर्तन,

अन्यथाकरण, रूढ़िकरण, अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार, अनाचार, हीनाधिक करण होता है, उसी प्रकार धर्म, तीर्थ, पर्व, शिक्षा, राजनीति, सामाजिक व्यवस्था, कानून, विज्ञानादि में भी होता है। इसलिए सत्यग्राही, विवेकी जनों को राजहंस के समान 'क्षीरनीरवत्' व्यवहार करना चाहिए। अर्थात् जिसप्रकार राजहंस पानी मिश्रित दूध में से दूध को ही ग्रहण करके पानी को छोड़ देता है उसी प्रकार सत्य निष्ठों को प्रत्येक क्षेत्र में प्रत्येक समय में सत्य/यथार्थ को ही स्वीकार करना चाहिए असत्य का बहिष्कार करना चाहिए।

भूतकाल साक्षी है, वर्तमान में वास्तविक है, अनुभव से सिद्ध है कि महापुरुषों ने जो आदर्श प्रस्तुत किया, जिस संस्था/संगठन/मिशन/संघ का निर्माण किया। उसके निमित्त से ही अनेक झगड़े, फूट, मनोमालिन्य, अनादर्श, युद्ध हत्यायें हुई हैं। एक धर्म-संम्प्रदाय अन्य धर्म-सम्प्रदाय से, एक राष्ट्र अन्य राष्ट्र से, एक जाति अन्य जाति से, एक व्यक्ति अन्य व्यक्ति से स्वयं को श्रेष्ठ मानता है, यह एक विचित्र सत्य है। दूसरों से घृणा करके स्वयं घृणित हो जाता है और घृणा के पात्र बन जाता है। इससे विपरीत अपवाद रूप से कुछ व्यक्ति दूसरों से मित्रता का व्यवहार करते हैं वे ही दूसरों से पूज्यनीय बनते हैं। महान् बनते हैं।

''दूर से सुन्दर लगे'' (दूर के ढोल सुहावने)

(तर्ज - 1. अच्छा सिला दिया तूने... 2. छोटी छोटी गैया...)

दूर से सुन्दर लगे जंगल समन्दर, दूर से ही मनोहर है महानगर
अनुभव होता है वहाँ जाने से, अनुभव होता है किम्पाक खाने सेSS (टेक/स्थायी)

जादूविद्या दूर से भयावह लगती, प्रसिद्धि भी दूर से सुहानी लगती
युद्ध कथा सुनने में मनोहर लगती, आध्यात्मिक चर्चा नीरस ही लगती... (1)

दूसरों की निन्दा अति मीठी लगती, स्व-सुधार कथा कटु नीम (विष) लगती
बातें लड़ाने में शूरवीर होते हैं, स्व-कर्त्तव्य करने में हतभाग्य होते हैं... (2)

बड़े-बड़े लोग तो भेड़िया सम होते हैं, दूसरों के शोषण से बड़े जो होते हैं
छोटे छोटे लोग न खोटे ही होते हैं, छोटे छोटे बच्चे क्या दुष्ट ही होते हैं?... (3)

जंगल तो दूर से सुन्दर लगते हैं, क्रूर पशु-पक्षी कीट पतंग भरे हैं
समन्दर में लवणाक्त पानी ही होता है, भूकम्प सुनामी हिंस्र प्राणी भरा है... (4)

महानगरी की महामहिमा न्यारी है, जंगल समन्दर सम दूर से प्यारी है
भीड़ रहे लाखों की समाज से खाली है, भौतिक साधन युत शान्ति से खाली है...(5)

हर प्रदूषण की जननी है नगरी, साक्षर तो होते है संस्कृति से खाली
शरीर श्रम विहीन तनाव से भरी, धन-जन से भरी संस्कार से कोरी... (6)

क्रिकेट का नशा भारत में भारी है, टी.वी में क्रिकेट देखे जनता सारी है
धर्म कर्म पढ़ाई भी छोड़ती जनता, खाना पीना सोना छोड़ती है जनता... (7)

इससे धन स्वास्थ्य पढ़ाई की हानि है, राग-द्वेष होने से धर्म की हानि है
गेंद के उछाल को देखती है जनता, गेंद ने गुलाम बनाया अरबों जनता... (8)

मेला महोत्सव में भीड़ होती है अपार, दूर से देखने में लगती है मनोहर
भीड़ में ही होते हैं अनेक अपराध, दुर्घटणा रोग से मरे लोग अपार... (10)

सत्ता-सम्पत्ति की मोह माया है भारी, मृगमरीचिका सम दूर से मनोहारी
इसके पीछे भागने वाले दुखियारी, मिले या न मिले दोनों में दुःखभारी... (11)

कनकनन्दी ने जो पढ़ा सुना गुना है, जनता के हित हेतु यहाँ लिखा है।
नशेड़ी को नशा तो सदा भाता है, कमी वही जाने जो नशे से दूर है।।... (12)

''दुनियाँ वालों की दोगली कहानी''

(तर्ज - सुनो सुनो ऐ दुनियाँ वालो...)

देखो देखो ऐ दुनियाँ वालों, दुनियाँ वालों की दोगली कहानी।
जिसे नकारे, उसे भी करे, कथनी-करनी में है बेईमानी।।... (टेक/धत्ता)

तम्बाखू न खाओ डॉक्टर कहें, स्वयं भी खाएँ ऐसे वे ज्ञानी...2
समाचार में निषेध छापे, छपाए विज्ञापन ऐसे वे ज्ञानी...2
जिसे नकारे... देखो देखो... (1)

संसद बनाये न्याय संविधान, स्वयं ही तोड़े वे कानून...2
स्वजाति भक्षी सम मानव, स्वभक्षी बना महादानव...2
जिसे नकारे... देखो देखो... (2)

स्वयं कराये मद्य निषेध, स्वयं भी पिये बेचे भी मद्य...2
पशुक्रूरता करें निषेध, वधशाला में लाखों के वध...2
जिसे नकारे... देखो देखो... (3)

अहिंसाधर्म प्रधान कहे हैं, कषाय भाव से स्वयं को हने...2
प्रत्येक जीव में आत्मा माने, तथापि उनसे घृणा भी करें...2
जिसे नकारे... देखो देखो... (4)

हर जीव को माने प्रभु का अंश, उनको मारे उनको खाये...2
प्रभु के नाम से बलि चढ़ाये, प्रभु संतोष हेतु उन्हें सताये...2
जिसे नकारे... देखो देखो... (5)

साक्षर बनकर राक्षस बने, नेता बनकर शोषण करें...2
नौकर होकर शाही बने, प्रजा-राजा को नौकर माने...2
जिसे नकारे... देखो देखो... (6)

मानव से हारे बगुला-भगत, धूर्त-सियार, कौआ-चालाक...2
क्रूर हिप्पो सर्प व सिंह, मच्छर बिच्छू लोमड़ी व जोंक...2
जिसे नकारे... देखो देखो... (7)

मुँह में राम बगल में छुरी, वचन मनोहर हृदय कटारी...2
बाह्य विदुर तो अन्तः शकुनी, अति विचित्र मानव की कहानी...2
जिसे नकारे... देखो देखो... (8)

''सुखी एवं दुखी होने के कारण''
(दुखी की विकृत भावना)

हे दुःखी देश इंडिया! सुखी बनने का उपाय करो
(खुशी के पैमाने पर भारत का स्थान 90वें स्थान पर पृथ्वी में)
(एक अन्तर्राष्ट्रीय विदेशी रिपोर्ट पर आधारित)

(तर्ज - 1. है यही समय की पुकार... 2. सुनो सुनो ऐ दुनियाँ वालों...)

सुनो इंडियन! सुनो दुःखी देश, तुम्हारे दुःखों के सच्चे कारण।
इसे सुनकर निवारण कर दुःखों के कारण हर प्रकार।।...

तुम हो आध्यात्म देश भारत, विश्व गुरु भी कहलाते थे।...2
अक्षय अनन्त निर्वाण सुख तुम्हारे पूर्वज पाते थे।।...2
इस सुख हेतु चक्रवर्ती का भी भोग-वैभव त्यागते थे।
आत्मा के शोध-बोध-प्राप्ति से परम सुख को पाते थे।। (1) सुनो इंडियन...

तुम तो तुम्हारे पूज्य पुरूषों से विपरीत काम करते हो।...2
इसलिए तो खुशीस्तर पर 90वें स्थान को पाते हो।।...2
लक्ष्य तुम्हारा भौतिक हुआ खाना-पीना मजा करना।
इसी लक्ष्य से चमड़ी, दमड़ी, पढ़ाई में मस्त रहना।। (2) सुनो इंडियन...

इसलिए न्याय-अन्याय व करणीय-अकरणीय न मानते।...2
भ्रष्टाचार व मिलावट तथा धोकाधड़ी पाप करते।।...2
अकल बिना नकल करते स्वयं को सुपर मानते।
फैशन-व्यसन बाह्य दिखावा में शक्ति सम्पत्ति गंवाते।। (3) सुनो इंडियन...

आलस्य, प्रमाद, कामचोरी में समय बुद्धि गंवाते हो।...2
जिसके कारण स्वास्थ्य हानि व आत्मिक पतन करते हो।।...2
फेइम-नेइम मनी गेइन हेतु हर काम तुम करते हो।
शिक्षा, व्यापार राजनीति, सेवा धर्म भी करते हो।। (4) सुनो इंडियन...

दूसरों के गुण विकास से भी ईर्ष्या-द्वेष-घृणा करते हो।...2

दुःखी रोगी दीन, गरीब का घृणा से सहयोग न करते हो।।...2
गुण-ग्रहण का भाव न रखते, निन्दक गुण द्वेषी बनते हो।
गुण हीन व सदोषी होते भी स्वयं को महान् जताते हो।। (5) सुनो इंडियन...

सादा जीवन उच्च विचार हीन कृत्रिम जीवन ढोते हो।...2
सात्विक पौष्टिक ताजा भोज्य छोड़ तामस भोजन करते हो।।...2
माता-पिता की सेवा न करते संयुक्त परिवार न भाता है।
संकीर्ण-स्वार्थ व स्वच्छन्द जीवन तुमको अधिक सुहाता है।।(6) सुनो इंडियन...

प्रदूषण व गन्दगी फैलाना तेरा जन्म सिद्ध अधिकार।...2
जाति धर्म भाषा क्षेत्र हेतु भेद भाव तुझे प्रियकर।।...
मन में कुछ, वचन में कुछ और काया में कुछ करते हो।
धर्म शिक्षा व कानून, कार्य में एक रूप न लाते हो।। (7) सुनो इंडियन...

अति लालसा तृष्णा हेतु अन्याय से भी धन कमाते।...2
जन्म-मृत्यु-विवाह-पार्टी में फिजूल खर्च भी करते।।...2
इसके हेतु ऋण भी लेते, ब्याज से धन हानि करते हो।
खेल-खिलाड़ी, नट-नटी हेतु फिजूल खर्च भी करते हो।। (8) सुनो इंडियन...

अन्नदाता किसान हेतु सरकार न धन खर्च करती।...2
मांस, मद्य व खेलादि हेतु प्रचुर धन भी करती।।...2
कानून तुम्हारा अति खर्चीला शीघ्र भी न्याय न मिलता है।
राजतंत्र अतिभ्रष्ट तंत्र जंगली राज भी चलता है।। (9) सुनो इंडियन...

इत्यादि कारण तनाव, अशान्ति रोग से पीड़ित होते हो।...2
डिप्रेशन फोबिया आदि से आत्म हत्या तक करते हो।।...2
इन कारणों से तुम्हारी खुशी का स्तर भी घट जाता।
खुशी ही नहीं तो आत्मिक शान्ति का आनंद तूँ कहाँ पाता।। (10) सुनो इंडियन...

सुख यदि चाहो कुप्रवृत्ति त्यागो करो हे! सत् प्रवृत्ति।...2
''कनकनन्दी'' की पवित्र भावना पाओ हे आत्म संतुष्टी।।...2

सुनो इंडियन! सुनो दुखी देश, तुम्हारे दुःखों के सच्चे कारण।
इने सुनकर निवारण दुःखों के कारण हर प्रकार।। (11) सुनो इंडियन...

''विज्ञान के अन्धकार पक्ष''
(विज्ञान के दुरुपयोग से विनाश)

(रागः यमुना किनारे श्याम...)

विज्ञान का दुरुपयोग किया न करो, विनाश श्रृंखला आरम्भ किया न करो
सत्य-तथ्य को स्वीकार किया भी करो, यन्त्रों का सदुपयोग किया ही करो
दुरुपयोग अतियोग से हानि होती है, ''अति सर्वत्र वर्जयेत्'' नीति होती है...(टेक)

विज्ञान को अज्ञात है आत्म विज्ञान, परम विज्ञान तथा परिनिर्वाण
आत्म विकास का ज्ञान अभी तो नहीं; आत्मिक शान्ति का मार्ग जानता नहीं
परम सत्य व ब्रह्माण्ड में पहुँच नहीं है, स्वयं को भी सही जानता नहीं है... (1)

विनाशक गाथा नागासाकी भी कहता, हिरोशिमा विध्वंस की लीला बतलाता
विश्वयुद्ध सर्वयुद्ध अन्धकार बताते, विज्ञान की विनाशक शक्ति भी बताते
विज्ञान विशेषज्ञान नहीं बताता, विज्ञान विपरीत ज्ञान सिद्ध है करता... (2)

अस्त्र-शस्त्र मारणास्त्र अणुबमादि, जीव विनाशक प्रदूषक जो यन्त्रादि
विषाक्त गैस आदि जो विनाशकारी, पर्यावरण ध्वंसी कल कारखाना भारी
तथा ही यान-वाहन या उद्योग, हिंसा प्रदूषणकारी सर्व अयोग्य... (3)

जिससे जीवन चर्या होती कृत्रिम, निष्क्रिय आलस्यपूर्ण भोगवादी जीवन
तन-मन रोगकारी आत्म पतन, फैशन व्यसनमय है निम्न जीवन
ऐसा विज्ञान तथा वैज्ञानिक उपकरण, समस्त अहितकारी विशेषजान... (4)

अतएव विज्ञान को धर्ममय होना जरूरी, अहिंसा व आध्यात्ममय पर उपकारी
हिताहित विवेकयुक्त सत्य पुजारी, वैश्विक दृष्टि सम्पन्न विकासकारी
''कनकनन्दी'' भावना भाये हितकारी, आध्यात्म विज्ञान हो सर्वोपकारी/(गुणकारी)...(5)

''बड़ा ही स्वार्थी है मानव मनुआ''

(रागः 1. छोटी छोटी गैया... 2. बड़ा नटखट... 3. गायेंगे गायेंगे हम वन्दे मातरम्...)

बड़ा ही/ (महान्) स्वार्थी है ये मानव मनुआ
स्वार्थवश करता है सर्व क्रिया
स्वार्थ के आगे न देखता है भैया, माता पिता या नैतिक क्रिया
स्वार्थ ही माता पिता बन्धु व भैया, स्वार्थ ही स्वर्ग मोक्ष धार्मिक क्रिया...(स्थायी)...

स्वार्थ से शत्रु का पग भी पड़ता, स्वार्थ से माता का हनन करता
स्वार्थ बिना पिता को न पानी पिलाता, स्वार्थवश पत्नी की आज्ञा पालता
स्वार्थ से अन्याय अत्याचार करता, स्वार्थ को अपना सर्वस्व मानता (1)

स्वार्थ से चोरी व डकैती करता, स्वार्थ से शोषण अन्याय करता
स्वार्थ से असत्य मायाचारी करता, स्वार्थ से हिंसा व परिग्रह करता
इसके हेतु है विदेश भी जाता, विधर्मी पापी की सेवा भी करता (2)

स्वार्थ से प्रभावित धर्म को करता, स्वार्थ से प्रभावित धर्म को तजता
स्वार्थ के लिए न्याय कानून तोड़ता, इसके हेतु मादक वस्तु बेचता
मानव पशु-पक्षी स्व बच्चा बेचता, शील सदाचार स्वदेश बेचता (3)

स्वार्थ से गुरु से भी गद्दारी करता, स्वार्थ से कृतज्ञ व कृतघ्न बनता
स्वार्थ से निन्दा भी मधुर लगती, स्वार्थ बिन हित बातें कड़वी लगती
स्वार्थ के समक्ष ब्रह्माण्ड भी है छोटा, स्वार्थ के बिना परमार्थ लगता खोटा (4)

मानव सम स्वार्थी अन्य प्राणी नहीं है, कीट व पतंग पशु-पक्षी कोई नहीं है
वृक्ष से पशु तक उपकारी होते, इसके बिना मानव जीवित न होते
मानव बिना इनका होता उपकार, फलते फूलते होते है निहाल (5)

अब तो मानव स्वार्थ त्याग कर, परोपकार व परमार्थ को वर
संकीर्णता से तुम उदार बनो, परोपजीविता और शोषण छोड़ो
आत्मिक वैश्विक भावना धरो, कनकनन्दी का सद् आह्वान सुनो (6)

"अपनी महत्ता हे मानव! तुम तो मानो"

(तर्ज- 1. दे दी हमें आजादी बिना... 2. ओ दीनबन्धु श्रीपती... 3. जय जय श्री अरिहन्त देव...)

अपनी महत्ता हे मानव! तुम तो जानो,
अपनी उपलब्धि का उपयोग करना भी जानो
अनन्त जन्म बाद मिले मानव जन्म है,
मोक्ष के साधनभूत यह उत्तम/(श्रेष्ठ) जन्म है... (टेक)
यदि आत्म विकास न किया इस जन्म में,
अधोपतन निश्चय जानो इस जन्म में
अनन्त भव भ्रमण होगा नीच गति/(योनि) में,
नरक निगोद पशु तिर्यञ्च नीच गति/(योनि) में ...(1)

मानव के आयु गति शरीर ज्ञान को जानो,
अत्यन्त विशिष्ट है संसार में जानो
इसके सदुपयोग से परम विकास है,
यदि किया दुरुपयोग तो पतन अवश्य है ...(2)

आयु का सदुपयोग जन्मनाश निमित्ते,
गति का सदुपयोग पञ्चम गति/(निर्वाण) निमित्ते
देह/(शरीर) का उपयोग विदेही होने के हेतु,
ज्ञान का उपयोग सर्वज्ञ होने के हेतु ...(3)

तेरा शिर है महान् उन्नति का है निशान,
आत्म गौरव की ऊँचाई का प्रतीक है महान्
देव शास्त्र गुरु गुण गुणी प्रति यदि न झुका है,
अहंकार का प्रतीक निश्चय से मान है ...(4)

विशाल मस्तिष्क तेरी ज्ञानवृद्धि निमित्ते,
हिताहित विवेक की प्राप्ति के निमित्ते

सीधा मेरूदण्ड तेरा सीधा विकास हेतु है
उन्नत हाथ तेरा महान् कर्त्तव्य/(कार्य) हेतु है ...(5)
कर्ण का सदुपयोग तत्त्व श्रवण द्वारा रे
चक्षु का सदुपयोग प्रभु दर्शन द्वारा रे
जिह्वा का सदुपयोग तत्त्वचर्चा होने से
कण्ठ का सदुपयोग प्रभु गुण गान से ...(6)

पैर का सदुपयोग तीर्थयात्रा के द्वारा,
पेट का सदुपयोग सात्विक अन्न के द्वारा
अन्न का सदुपयोग सच्चा कार्य होने से,
जीने का सदुपयोग दिव्यज्ञान प्राप्ति से ...(7)

धन का सदुपयोग चतुर्विध दान के द्वारा,
समय का सदुपयोग परोपकार के द्वारा
साधनों का सदुपयोग है सिद्धि के द्वारा,
उपलब्धि का उपयोग सदुपयोग के द्वारा ...(8)

'कनकनन्दी' तुम सदा सदुपयोग ही करो,
दुरुपयोग कभी भूलकर किसी का न करो
तेरा उपयोग है तेरा भाग्य निर्माता
कर्त्ता धर्त्ता हर्त्ता भोक्ता अथवा ज्ञाता

अपनी महत्ता हे मानव! तुम तो जानो,
अपनी उपलब्धि का उपयोग करना भी जानो
अनन्त जन्म बाद मिले मानव जन्म है,
मोक्ष के साधनभूत यह श्रेष्ठ/(महान्) जन्म है।

''न्यायाधीश की आत्मकथा''

(योग्य न्यायमूर्ति एवं अयोग्य न्यायमूर्ति का स्वरूप)

(रागः 1. नगरी-नगरी... 2. शायद मेरी...)

मैं हूँ न्यायमूर्ति न्याय करना है मेरी सहज वृत्ति
अपना-पराया, धनी-गरीब बिन मम सहज प्रवृत्ति... (टेक/स्थायी)

कर्म भूमि के प्रथम चरण में मेरा पहला जन्म हुआ
'मनु' रूप में मेरा सम्बोधन सबसे पहले प्रसिद्ध हुआ
'हा' 'मा' 'धिक' रूप में वाचनिक, दण्ड से प्रारम्भ हुआ
दोषानुरूप से दण्ड विधान, चिकित्सा समान प्रयोग किया... (1)

प्रथम श्रेष्ठ न्यायाधिपति में 'ऋषभ' रूप में प्रसिद्ध हुआ
भरतचक्री रूप में ऋषभ के पुत्र स्वरूप में प्रगट हुआ
तभी से अभी तक मैं करोड़ों, न्यायमूर्ति रूप न्याय दिया
राजतन्त्र से लोकतन्त्र तक, देश-विदेश में न्याय किया... (2)

राजतन्त्र में स्वयं राजा ही, मुख्य न्यायाधीश होता था
मन्त्री, पुरोहित, न्यायमूर्ति सह, निर्णय स्वयं ही लेता था
अभयकुमार, विक्रमादित्य आदि, मेरा श्रेष्ठ न्यायिक रूप है
सत्यनिष्ठ निष्पक्ष रूप से निर्भयता से न्याय स्वरूप है... (3)

न्यायानुसार स्वयं को या स्वजन को भी दण्ड मैं देता हूँ
लोभ, राग, द्वेष, ईर्ष्या मोहवश पक्षपात मैं न करता हूँ
इसलिए मुझे धर्मराज, न्यायाधीश न्यायमूर्ति कहते
दण्डधिकारी, न्यायाधिपति या न्यायकर्त्ता भी मुझे कहते ...(4)

मेरे कारण भी समाज राष्ट्र में, न्याय-नीति रक्षा होती
सुख समृद्धि सदाचार शान्ति समता निर्भयता होती
मेरे बिना ये सम्भव न होंगे, 'मत्स्य न्याय' का होगा प्रसार

जंगली राज्य का विस्तार होगा, दुर्बल सज्जन का होगा संहार ...(5)

हाय रे! दुर्भाग्य मेरे नाम पर, कुछ पापी होते हैं न्यायाधीश
न्याय के नाम पर अन्याय करते, मेरी शुचिता का करते विनाश
धन, मान, प्रसिद्धि के हेतु अथवा स्वार्थ या पक्षपात से
राग-द्वेष या मोह अज्ञान से अथवा दबाव रूढ़ कानून से ...(6)

करते जो फैसला अविवेकी, सत्य-तथ्य-न्याय से विपरीत
सच्चे न्याय की हत्या करके, करते निर्दोष को दण्डित
स्वतन्त्र भारत में अभी भी चलते, विदेशी शासक/(गुलाम भारत) के कानून
वकील प्रायोजित झूठे साक्षी भी, आधारित फैसला हेतु कानून ...(7)

इसलिए तो फैसला भी अति देरी से होता है भारत में
मुकदमों का पहाड़ लगा है आध्यात्मिक भारत में
कर्त्तव्यनिष्ठा से न्यायालय यदि सक्रिय होता है कभी-कभी
प्रभावशाली दोषी आरोप लगाते हैं न्यायालय न होता ऐसा कभी ...(8)

विधायिका व कार्यपालिका में, चलता अभी है जंगली राज
सत्य-न्याय व समता बिना भारत में चलता बल का राज/(मत्स्य का राज)
इसलिए मेरा सत्य रूप का अति आवश्यक इस देश में
मम स्वरूप बताने हेतु 'कनकनन्दी' का प्रयास इस रूप में ...(9)

हम सब बच्चे दिल के सच्चे

हम सब बच्चे हैं...दिल के हम सच्चे हैं।
बुद्धि के थोड़े कच्चे हैं...तो भी बड़ों से अच्छे हैं।
हम न करते हैं विद्वेष...बड़ों के जैसे विनाश। ला..ला..ला..ला..

प्रकरण - 2

भारतीय! अपनी कमियों के लिए पाश्चात्य संस्कृति को दोष न दें किन्तु उनकी अच्छाईयों को स्वीकार करें!

(-क्या पाश्चात्य संस्कृति (सभ्यता) ही दोषी है?-)

कहावत है 'नाच न जाने आंगन टेढ़ा' अर्थात् स्वयं के दोष दूसरों के ऊपर आरोपित करना। मनोवैज्ञानिक, आनुभविक सिद्धांत है कि जब मनुष्य किसी कार्य में असफल हो जाता है तो स्वयं को सांत्वना देने के लिए या स्वयं की कमी को छिपाने के लिए उस असफलता का कारण दूसरे व्यक्ति/कारक/कारणों के ऊपर लाद देता है। इसे मनोवैज्ञानिक शब्दावली में अचेतन संतुष्टि कहते हैं। कोई बच्चा अपनी असावधानी के कारण गिर जाता है तो भी वह कहने लगेगा कि अमुक बच्चा ऐसा किया या वैसा किया जिससे मैं गिर गया। जब एक टीम हार जाती है तो पराजित टीम वाले विजयी टीम के ऊपर दोषारोपण करेंगे। स्वदोष को स्वीकार करने का आत्मबल बहुत ही कम व्यक्तियों में होता है। जो स्वदोष को स्वीकार करता है जानना चाहिए कि उसमें आत्म विकास का नैतिक बल है। जो स्वदोष को दूसरों के ऊपर लादता रहता है उसमें आत्म-विकास का नैतिक-साहस/बल/पुरुषार्थ नहीं है। आत्म-विश्लेषण पूर्वक जो दोषों को दूर करके गुणों को विकसित करता है उसका तो विकास होता है इसके विपरीत जो दोषों को दूर नहीं करता परन्तु दूसरों के ऊपर आरोप करता है उसका विनाश हो जाता है।

भारत में एक व्यापक दुष्प्रवृत्ति या फैशन फैला हुआ है कि यदि कोई किसी भी प्रकार की कुप्रवृत्ति करता है तो लोग कहने लगते हैं कि यह पाश्चात्य संस्कृति/सभ्यता/संस्कार का फल है। क्या ऐसा कहना अविवेक/अनिर्णय/पक्षपात/परम्परावादी/कूपमण्डूकता/संकीर्णता का परिचायक नहीं है? क्या भारतीय लोग जो कुछ दुष्प्रवृत्ति/भ्रष्टाचार/पाप/फैशनादि करते हैं वे सब पाश्चात्य संस्कृति के कारण करते हैं? क्या पाश्चात्य संस्कृति पूर्ण निन्दनीय/

हेय/तुच्छ/अमानवीय/अनैतिक है? क्या भारत की हर परम्परा पवित्र/गौरवपूर्ण/नैतिक/धार्मिक/वैज्ञानिक है? क्या भारत की सतीदाह प्रथा/दहेज प्रथा/विघटन/फूट/अन्तर्कलह/बलि प्रथा/अन्धपरम्परा आदि पाश्चात्य से आयात है? क्या ये प्रथायें अच्छी है? क्या पाश्चात्य के वैज्ञानिक शोध-बोध-सोच-अविष्कार, यंत्र आदि को विवेकपूर्वक स्वीकार करना योग्य नहीं है? पाश्चात्य में कुछ अयोग्य परम्परा है तो भारत में भी कुछ अयोग्य परम्परा पहले भी थी और अभी भी कुछ है। पाश्चात्य में भी कुछ योग्य गुण हैं तो भारत में भी कुछ योग्य गुण हैं।

पाश्चात्य देश अधिकतर शीत प्रधान देश होने के कारण उनका भोजन, वेशभूषा, रहन-सहन शीत के अनुकूल एवं उष्ण के प्रतिकूल होना स्वाभाविक है। अतः सूट, कोट, टाई उनके लिए योग्य है। भारत ग्रीष्म प्रधान होने के कारण धोती, दुपट्टा भारतीयों के लिए योग्य है। पाश्चात्यों के लिए चाय, कॉफी योग्य है परन्तु भारतीय लोग ग्रीष्म ऋतु में भी कूलर, ए.सी. में बैठकर चाय, कॉफी पियेंगे और ठण्डाई, लस्सी शर्बत भी पियेंगे। इसी प्रकार कुछ व्यवहार पाश्चात्य लोगों के लिए समुचित हो परन्तु भारतीयों के लिए अनुचित है। यदि भारतीय लोग अविवेकपूर्ण अन्धानुकरण करते हैं तो दोष क्या पाश्चात्य संस्कृति का है? यह तो भेड़चाल में चलने वाले भारतीयों का दोष है? ऐसी परिस्थिति में पाश्चात्य संस्कृति के ऊपर दोषारोपण करना भारतीयों की क्या गलती नहीं है?

पाश्चात्य देश में सफाई को बहुत महत्त्व देते हैं। कोई भी जहाँ-तहाँ थूंकना, छिलका फेंकना, मल-मूत्र त्याग करना नहीं करते हैं। फल खाने के बाद जो छिलका बचता है तो उसे भी वे पास में ही रखे रहते हैं। जब तक कूड़ा-दानी नहीं मिलती है; कूड़ा-दानी आदि निश्चित स्थान में ही वे गन्दगी डालते हैं। जहाँ-तहाँ गन्दगी फैलाना कानूनतः निषेध है और दण्डनीय अपराध है। परन्तु भारतीय लोग पशु-पक्षी के समान जहाँ-तहाँ गन्दगी मल-मूत्र फैलाते रहते हैं। घर की गन्दगी घर के अन्दर से ही आम रास्तों में फेंक देते हैं। रास्ते में थूंकने की बात तो छोड़ो मलमूत्र भी त्याग कर देते हैं। घर का मल-मूत्र भी

रास्ते के ऊपर डाल देते हैं। रास्ते के पार्श्वभाग में भी कम डालेंगे, परन्तु रास्ते के मध्य में अधिक डालेंगे। आमने-सामनेवाले घर की गन्दगी झाड़ते हुए रास्ते के बीचों-बीच गन्दगी को एक दूसरों के तरफ सरकाते रहेंगे। और भी देखने में आता है, चौराहे पर, बस स्टैण्ड पर, रेल्वे स्टेशन पर, धार्मिक क्षेत्र पर अधिक गन्दगी फैलाते हैं। धर्मशाला में पान के पीक भी जहाँ-तहाँ डाल देते हैं। रास्ते में गन्दगी, मल, मूत्र के साथ-साथ जूठन, अण्डे के छिलके, मरे हुए पशु-पक्षी भी डाल देते हैं। क्या यह सब पाश्चात्य संस्कृति की देन है? टी.वी. संस्कृति की देन है?

पाश्चात्य के लोग समय को बहुत महत्त्व देते हैं, समय पर हर कार्य करते हैं। सामाजिक कार्य, राष्ट्रीय कार्य सामूहिक कार्य में तो वे और भी अधिक समयानुबद्धता से कार्य करते हैं। वहाँ की डाक, तार रेलादि की व्यवस्था भी समय-सारणी के अनुसार चलती है। भारत में क्या शिक्षित, क्या अशिक्षित, क्या नीच कर्मचारी, क्या उच्च नौकर तक, न व्यक्तिगत कार्य, न सामाजिक कार्य, न धार्मिक कार्य समय के अनुसार करते हैं, इतना ही नहीं उनकी अपनी नौकरी की जो कार्य सारणी है उसके अनुसार भी कार्य नहीं करते हैं। भारत के कर्णधार कहलाने वाले नेता, मंत्री आदि भी निर्धारित कार्यक्रम में कुछ घण्टों की देरी से उपस्थित होते हैं। कभी-कभी तो कुछ व्यक्तियों का कार्यक्रम प्रातः में रहता है तो वे रात को आते हैं। समय पर पहुँचना स्वयं का ओछापन मानते हैं। देरी से पहुँचना स्वयं का गौरव मानते हैं। विद्यार्थी देश के भविष्य हैं और उनको प्रशिक्षित करने वाले शिक्षक देश के निर्माता होते हैं परन्तु न विद्यार्थी समय पर विद्यालय में पहुँचते हैं न शिक्षक समय पर विद्यालय पहुँचते हैं। क्या ऐसी दुष्प्रवृत्तियाँ पाश्चात्य में है?

पाश्चात्य जगत् के लोग प्रायः कर्त्तव्य स्वावलम्बन पूर्वक करते हैं। वे अपने कर्त्तव्य को अपना धर्म मानते हैं। उनके मतानुसार Work is Worship अर्थात् कर्त्तव्य ही पूजा है। वे स्वयं के कर्त्तव्यों को समय के अनुसार कर्त्तव्यनिष्ठ होकर करने में स्वयं को गौरवान्वित अनुभव करेंगे। परन्तु भारतीय लोग वर्तमान यंत्र चालित मानव होते जा रहे हैं। थोड़ी सी भी दूर चलना है तो यान

वाहन चाहिए। पानी पीने के लिए पानी का ग्लास भी चाहिए तो नौकर चाहिए। अभी तो कुछ लोग घर में बना हुआ भोजन नहीं करते हैं परन्तु होटल में या बाजार में प्राप्त रेडीमेड भोजन करते हैं। क्योंकि घर में भोजन बनाने के लिए परिश्रम करना पड़ता है।

पाश्चात्य देश में राष्ट्रीयता या 'राष्ट्रीय चारित्र' सर्वाधिक रूप में है। जिस प्रकार भक्त भगवान् के लिए समग्रता से समर्पित होकर के पूजा, अर्चना, सेवा करता है उसी प्रकार पाश्चात्य के लोग राष्ट्र के लिए अपना कर्त्तव्य करते हैं, उनका राष्ट्र उनके लिए कर्मस्थल, धर्मस्थल है। वे राष्ट्र की क्षति स्वयं की क्षति मानते हैं। परन्तु भारतीय लोग जिस प्रकार गिद्ध पक्षी शव को नोंच-नोंच कर खाता है उसी प्रकार राष्ट्र को येन-केन प्रकार से नोंच-नोंच कर खाने लगे हैं। जो भारत की दुहाई देते हैं, भारत की अखण्डता एवं एकता के नारे लगाते हैं, वे ही अधिक राष्ट्र को क्षत-विक्षत करने में लगे हुए हैं। राष्ट्रीयता के अभाव के कारण भारत में सर्वाधिक क्षेत्र यथा- रोड, डाक-तार सेवा, सरकारी विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय, चिकित्सालय, रेलविभाग आदि की दुर्दशा सर्वविदित है। राष्ट्रीयता की कमी के कारण ही जब किसीको किसी प्रकार की माँग रखनी है तो जब हड़ताल आन्दोलन करते हैं, तब वे राष्ट्रीय सम्पत्ति तथा-बस, रेल, स्कूल आदि की तोड़ फोड़ करते हैं, आग लगा देते हैं। क्या यह सब शिक्षा पाश्चात्य संस्कृति से मिली है? पाश्चात्य देश में जब कुछ माँग रखते हैं तो वे रोज की अपेक्षा अधिक काम करते हैं और राष्ट्रीय सम्पत्ति को किसी प्रकार क्षति नहीं पहुँचाते हैं। क्या उपर्युक्त दुर्गुण पाश्चात्य संस्कृति की देन है? अथवा भारतीयों की दूषित विकृत मानसिकता की देन है?

प्राचीन काल से ही भारत देश विश्व गुरु रहा है। जब पाश्चात्य संस्कृति के लोग जंगली संस्कृति में जी रहे थे तो भारतीय लोग आध्यात्मिक संस्कृति में जी रहे थे। भारत से ज्ञान, विज्ञान, गणित, ज्योतिष, ध्यान, आयुर्वेद, दर्शनशास्त्र आदि का प्रकाश बाद में विदेश में फैला। परन्तु आज जनसंख्या में द्वितीय स्थान को प्राप्त करने वाला भारत भ्रष्टाचार में नवें स्थान में है।

शायद भारत भ्रष्टाचार में प्रथम स्थान प्राप्त करने के लिए दिन दुगुना-रात चौगुना भ्रष्टाचार को बढ़ा रहा है। जिस प्रकार समुद्र के हर जल बूँद में लवण रस व्याप्त है उसी प्रकार आज भारत के हर क्षेत्र में और प्रायः हर व्यक्ति में भ्रष्टाचार व्याप्त है। चतुर्थश्रेणी के नौकर से लेकर प्रथम श्रेणी के नौकर तथा न्यायाधीश, प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री आदि सब भ्रष्टाचार में लिप्त पाये जाते हैं। जहाँ के नेता पशुओं का चारा भी खा लेते हैं, जहाँ के अहिंसक शाकाहारी लोग बूचड़खाना खोलते हैं, डालडा में चर्बी मिलाते हैं, जहाँ के मुख्य न्यायाधीश रिश्वत लेने में लिप्त हैं, जहाँ के प्रधानमंत्री घोटाला के सरदार है, जहाँ के डॉक्टर औषधि में मिलावट करते हैं, जहाँ के दूध के व्यापारी दूध में पानी नहीं मिला करके पानी में दूध मिलाते हैं। आज ऐसे भारतीय लोग स्वयं की हर गलती के लिए पाश्चात्य संस्कृति को गाली देने लगे हैं। क्या पाश्चात्य जगत् में भारतीय जैसा भ्रष्टाचार है? क्या भारतीय लोगों ने पाश्चात्य जगत् से भ्रष्टाचार की शिक्षा प्राप्त की? या भारतीय लोग पाश्चात्य जगत् के लिए भ्रष्टाचार की शिक्षा दे रहे हैं? आये दिन समाचार पत्र में पढ़ने में आता है कि विदेशी पर्यटकों को भारतीय ने लूटा, विदेशी महिला या लड़की का भारतीयों ने बलात्कार किया। अभी सब राष्ट्र मिलकर के अन्तर्राष्ट्रीय सौहार्द वर्ष मना रहे हैं तो भारतीय लोग घोटाला वर्ष पर्व मना रहे हैं।

भारत प्राचीन काल से ही धर्म प्रधान देश रहने के कारण जिस प्रकार भारतीय लोगों ने हिंसा को पाप माना है उसी प्रकार झूठ, चोरी, परिग्रह को भी पाप माना है। परन्तु भारतीय लोग रात में सेंध डालकर के कम चोरी करते हैं किन्तु दिन दहाड़े सफेद अधिक चोरी करते हैं। नौकरी में जो वेतन मिलता है वह तो गौण आमदनी है परन्तु रिश्वत लेना मुख्य कमाई है। रिश्वत के बिना न चपरासी कोई काम करता है, न उच्च कर्मचारी व पदाधिकारी काम करते हैं। इसे सुविधा शुल्क रूप में प्राप्त करते हैं। इसको प्राप्त करने की विभिन्न प्रणाली भी अपनाते हैं। विद्यालय में प्रवेश शुल्क रूप में या टयूशन के रूप में, डॉक्टर Visiting Fees या टेस्ट फीस के रूप में, ऑफीसर लोग चाय-नाश्ता के रूप में, नेता लोग व्यवस्था के रूप में, रिश्वत रूपी चोरी करते रहते हैं।

वकील एवं जज केस लड़ने के नाम पर या फैसला देने के नाम पर सुविधा शुल्क प्राप्त करते हैं।

जीवन में प्रगति करने के लिए अनुशासन का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। साधु, सन्त, तीर्थंकर, बुद्ध, गुरु, महापुरुष स्वयं अनुशासन में रहते हैं एवं दूसरों को अनुशासन की शिक्षा देते हैं। परन्तु भारतीयों का न व्यक्तिगत अनुशासन है, न सामुहिक अनुशासन है। भारतीय लोग बस अड्डे में, दुकान में, बाजार में यहाँ तक कि धार्मिक स्थल में धार्मिक कार्यक्रम में भी इधर-उधर की चर्चा करेंगे जहाँ-तहाँ अव्यवस्थित बैठ जायेंगे, एक दूसरे की निन्दा/चुगली करते रहेंगे। जिस चर्चा से न स्वयं के लिए लाभ है न दूसरों के लिए लाभ है, न वर्तमान के लिए लाभ है न भविष्य के लिए लाभ है ऐसी चर्चा करते रहेंगे। हो-हल्ला, उधम, उद्दण्डता, छेड़खानी करने में अपनी शान मानते हैं।

जीवन यापन के लिए न्यायोचित प्रणाली से भौतिक वस्तु प्राप्त करने के लिए व्यापारादिक करना पड़ता है। अन्याय से प्राप्त वस्तु के उपयोग से भावना भी दूषित हो जाती है। अन्याय से प्राप्त धन से शुद्ध शाकाहार करने पर भी वह भोजन पवित्र नहीं हो सकता है। इसलिए अमेरिकी ने एक शब्द गढ़ा है, सोशल रेसपोंसिबलिटी ऑफ बिजनेस अर्थात् व्यापार का सामाजिक दायित्व। व्यापारी को केवल लाभ बढ़ाने में ही लगे नहीं रहना चाहिए। उसे समाज के प्रति भी अपना दायित्व निभाना चाहिए, चाहे लाभ कम हो जाए। माल श्रेष्ठ गुणवत्ता वाला हो वह उचित कीमत पर बेचा जाना चाहिए व हानिकारक वस्तुओं का उत्पादन नहीं किया जाना चाहिए। सेवा व मजदूरी की दरें उचित होनी चाहिए। क्या स्वयं को महान् भारत के सपूत मानने वाले और पाश्चात्य संस्कृति को गाली देने वाले उपर्युक्त आदर्श को जीवन में उतारते हैं? धन कमाने के लिए शुद्ध हो या अशुद्ध असली हो या नकली, स्वास्थ्यकर हो या अस्वास्थ्यकर, हिंसात्मक हो या अहिंसात्मकादि किसी भी प्रकार के व्यापार करने में पीछे नहीं रहते हैं। भले पूजा-पाठ, धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन, उपवास, तीर्थ-यात्रादि करते रहेंगे परन्तु व्यापार में मिलावट, धोखा-धड़ी, चोरी, बेईमानी, झूठ आदि का सहारा लेते रहेंगे। पाश्चात्य देश अच्छी, सुन्दर, टिकाऊ चीज

बनाते हैं तो भारत नकली, रद्दी, चीज बनाता है। पाश्चात्य देशों में सही मोल सही तोल से व्यापार करते हैं तो भारत में व्यापारी लोग खरीदते समय अधिक तोल कम मोल करेंगे और बेचते समय कम तोल अधिक मोल करेंगे। क्या यह पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव है या भारतीयों की अप्रमाणिकता?

''आचारः प्रथमः धर्मः'' अर्थात् सदाचार, नैतिक व्यवहार प्रथम धर्म है, श्रेष्ठ धर्म है। पाश्चात्य देश में परस्पर प्रसन्न होकर अभिवादन करेंगे, बोलते समय कोई गलती होने पर या व्यवहार से कोई त्रुटि होने पर क्षमायाचना करेंगे, दूसरों से सहायता प्राप्त करने के बाद धन्यवाद देंगे, दूसरों की भूली हुई या रखी हुई चीज की कोई चोरी नहीं करेंगे आदि। उनके व्यावहारिक नैतिक धर्म जीवन्त रूप में है। भारतीय लोग धर्मशास्त्र से धर्म का पाठ पढ़ेंगे, धर्मसभा में धर्म का उपदेश सुनेंगे या सुनायेंगे परन्तु व्यवहार में धर्म विरूद्ध आचरण करेंगे। वचन में न मधुरता, व्यवहार में न नम्रता, हृदय में न पवित्रता, जीवन में न प्रामाणिकता, न दूसरों की सेवा को अपनाते हैं परन्तु केवल धर्म का आडम्बर ही रचाते हैं और भारत एक धर्म प्रधान देश है, भारत महान् है ऐसा चिल्लाते रहते हैं।

भारतीय लोग स्वयं को जितना धार्मिक मानते हैं वे उतने ही भ्रष्टाचारी, दंभी, मिथ्याचारी, अन्धविश्वासी, पंथवादी, रूढ़िवादी, संकीर्ण विचार वाले, सम्प्रदायवादी हैं। वे धर्म के नाम पर भेदभाव, फूट, वाद-वितण्डा, कलह-युद्ध आदि करने वाले हैं। एक ही शास्त्र या देव (भगवान्) या गुरु को मानने वाले भी छोटी-छोटी बातों को लेकर, अन्तर को लेकर परस्पर को नीचा दिखाते हैं, घृणा करते हैं, कष्ट देते हैं। हत्या करते हैं 'जीओ और जीने दो' का मंत्र बोलने वाले धर्म के लिए जीयेंगे नहीं जीने देंगे नहीं, परन्तु मरेंगे एवं मारेंगे।

महापुरुष, पूज्य पुरुष की मृत्यु के बाद उनकी मूर्ति की पूजा करने वाले, उनके नाम पर संस्था बनाने वाले, उनके गुणगान करने वाले पर्व मनाने वाले ऐसे भारतीय भी उनके जीवित रहते समय उनका आदर नहीं करेंगे, उनके आदर्श को स्वीकार नहीं करेंगे और यहाँ तक की विरोध करेंगे, कष्ट देंगे, निन्दा करेंगे। मृत्यु के बाद भी उनकी पूजा करने वाले भी उनके सिद्धान्तों

की उनके आदर्श की हत्या करेंगे। यदि विदेश के लोग, पाश्चात्य के लोग किसी भारतीय की प्रशंसा करेंगे तो उसका आदर करने लगेंगे उनके सिद्धान्त मानने लगेंगे। रवीन्द्रनाथ टैगोर को जब गीतांजली के लिए नोबल पुरस्कार मिला तो भारतीय लोग उसके बाद उनका आदर करने लगे और गीतांजली का आदर करने लगे।

जापानादि देश में रेल में भी पुस्तकालय की व्यवस्था होती है तथा रेल-यात्री यात्रा के समय में अनावश्यक गप्प, दूसरों की निन्दा, आलस्य आदि से अमूल्य समय को न गँवाकर विभिन्न साहित्य अध्ययन में समय बिताते हैं। परन्तु अधिकांश भारतीय रेल की यात्रा में ही क्या तीर्थयात्रा, पूजा, गुरु के उपदेश, शास्त्र, स्वाध्याय आदि में भी अनावश्यक गप्प, निन्दा, चुगली, कलह आदि में समय, शक्ति को गंवाते हैं।

भारतीय लोग अहिंसा, विश्वमैत्री 'वसुधैव स्वकुटुम्बकम्' विश्व-शान्ति की बहुत लम्बी चौड़ी चर्चा करते हैं परन्तु विदेश के लोग जिस प्रकार एम्बुलेन्स, रेडक्रास, रोटरी क्लब, लायन्स क्लब, आदि की स्थापना करके राष्ट्र, धर्म, जाति, भाषा के भेदभाव के बिना विश्वमानव की सेवा कर रहे हैं क्या उस प्रकार कोई भारतीय या भारतीय संस्था विश्व-मानव की सेवा कर रही है? नाइटेन्गल ने जो सेवा का आदर्श प्रस्तुत किया क्या वह पाश्चात्य देश की थी इसलिए उसका आदर्श अनुकरणीय नहीं है? अब्राहिम लिंकन ने मानव इतिहास का महाकलंक स्वरूप दास-प्रथा को दूर किया, क्या यह पाश्चात्य संस्कृति अनुकरणीय नहीं है? भारत में अति ही प्राचीन काल से दास-प्रथा का प्रचलन था और अभी भी बाल-श्रमिक, बन्धुआ, मजदूर, गरीबों का शोषण आदि के रूप में दास-प्रथा प्रचलन में है।

भारत बहुत ही ज्ञान-विज्ञान का देश रहा परन्तु अभी भी भारत में धर्म के नाम पर, परम्परा के नाम पर अनेक धर्मान्धता, संकीर्णता, दिखावा, ईर्ष्या, वैरत्व, फूट, झगड़ा, कलह, अज्ञानता व्याप्त है। भारतीय लोग केवल भारतीय परम्परा संस्कृति सभ्यता का थोथा घमण्ड करते हैं परन्तु प्राचीन परम्परा आदि से शिक्षा प्राप्त करके विकास नहीं करते हैं। इसलिए तो विनाश हो रहा

है। पाश्चात्य संस्कृति की निन्दा करने वाले क्या पाश्चात्य संस्कृति, सभ्यता या अन्धानुकरण नहीं करते हैं? पाश्चात्य देश में रेल, रेडियो, टेलीफोन, प्रेस, सिनेमा, टी.वी., ए.सी., कम्प्यूटर विद्युत, हवाई जहाज आदि अधिकांश वैज्ञानिक उपकरणों आविष्कार हुआ। क्या वे इन सब उपकरणों का प्रयोग नहीं करते हैं? क्या इन उपकरणों का त्याग करने से भारत विकास कर सकता है?

भारत के लोग जिस प्राचीन धार्मिक, वैदिक, गणितीय, ज्योतिष, मांत्रिक आदि ग्रंथों को श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं, महान् मानते हैं, ज्ञान-विज्ञान से पूर्ण मानते रहते हैं, विश्व-कल्याण के सिद्धांतों से भरपूर है ऐसा बखान करते हैं क्या वे उन शास्त्रों से जैसे पाश्चात्य मनीषी शोध-बोध करके विश्व को दिशा बोध दे रहे हैं वैसे क्या भारतीय लोग कर रहे हैं? जब पाश्चात्य विद्वान-वैज्ञानिक जिस विषय को आधुनिक वैज्ञानिक प्रणाली से प्रस्तुत करते हैं तब भारतीय लोग खोखले अहंकार से चिल्लाते हैं कि यह सब तो प्राचीन काल से ही हमें मालूम था। यदि मालूम था तो पाश्चात्य शोधार्थी के पहले तुम शोध करके विश्व के सामने प्रस्तुत क्यों नहीं करते हो?

मेरा अभिप्राय यह नहीं कि अपनी प्राचीन, सत्य-तथ्यपूर्ण, गौरवमयी परम्परा, सभ्यता, संस्कृति को भूल जाना चाहिए, नकारना चाहिए, हेय दृष्टि से देखना चाहिए परन्तु प्राचीनता से शिक्षा प्राप्त करके प्रेरणा लेकर, ऊर्जा को ग्रहण करके वर्तमान में सतर्क, कर्त्तव्य निष्ठ, पुरुषार्थी बनकर उज्जवल भविष्य के लिए प्रयाण करना चाहिए।

महात्मा गाँधी ने स्वदेशी अपनाओ का सिद्धांत दिया था। इसका यदि अभी अन्धानुकरण किया जायेगा तो भारतीय लोग नकली से नकली माल बनाकर अधिक से अधिक दाम में बेचेंगे। अभी विदेश से अच्छा माल भारत में आने पर भी जो भारतीय उत्पादक, निर्माता, कम्पनी, विक्रेता, जो घटिया माल निर्माण एवं विक्रय कर रहे हैं, वे क्या विदेशी माल नहीं आने पर प्रतिस्पर्धा के अभाव में मांग की अधिकता होने पर और भी घटिया, नकली, बेकार माल निर्माण या विक्रय नहीं करेंगे? मेरा स्वयं का अनुभव है जो जापान का पायलेट पीन वर्षों चलता है उसके नकल के भारतीय पायलेट पीन कुछ दिन मात्र चलते

हैं और कुछ तो एक अक्षर लिखने के लिए भी अयोग्य होते हैं। लावा के प्रवास के समय जयपुर से 3 पैकेट पीन मंगाया था जिसमें से एक भी पीन अच्छा नहीं था। विदेशी स्टेपलर में विदेशी पीन प्रयोग करने से एक भी पीन खराब नहीं होती है। परन्तु देशी पीन प्रयोग करने से 80 से 90% पीन तो खराब हो जाती है और स्टेपलर भी खराब हो जाता है। विदेशी पुस्तक में मुद्रण सम्बन्धी दोष प्रायः नहीं होते है परन्तु भारत में एक-एक पृष्ट में अनेक दोष होते हैं।

पाश्चात्य देश के छोटे-छोटे कानून को भी छोटे व्यक्ति भी पालन करते हैं। परन्तु भारत के बड़े से बड़े कानून को बड़े से बड़े व्यक्ति भी तोड़ते रहते हैं। जिस समय विदेश के लोग 21वीं शताब्दी के स्वागत के लिए अनेक अच्छी-अच्छी उपलब्धियों को प्राप्त करके आगे बढ़ रहे हैं उस समय भारत पृथ्वी में भ्रष्टाचार में 9वाँ, भिक्षा मांगने में तीसरा, बच्चा पैदा करने में द्वितीय स्थान रूप कलंक को लेकर पीछे पलायन कर रहा है।

अतः अभी समय आ गया है कि अपनी अच्छी परम्परा/संस्कृति/सभ्यता को स्वीकार करने के साथ-साथ पाश्चात्य के अच्छे गुण को अपनाते हुए भी दूसरों के अन्ध-भक्त न बने, जूठन को स्वीकार न करें, आधुनिकता के नाम पर सत्य को न नकारें, आक्षरिक-शिक्षित मूर्खों को (साक्षरों को) ज्ञानी, आदर्श, सुसंस्कृत न माने तथा जीवन में कर्त्तव्य निष्ठ, सत्यग्राही, स्वावलम्बी, तेजस्वी, निर्भयी, सदाचारी, ज्ञानी, प्रामाणिक, उदार, गंभीर, धीर, वीर बने।

जो अपना व्यक्तिगत कार्य, पारिवारिक कार्य, सामाजिक कार्य, नैतिक कार्य, आध्यात्मिक कार्य को सुचारू रूप से नहीं करते वे उत्तरोत्तर आलसी/पतित/अयोग्य हैं।

प्रकरण - 3

महानता एवं क्षुद्रता के लक्षण

(-बड़ा हुआ तो क्या हुआ?-)

सामान्य व्यक्ति सामान्यतः बड़ी-बड़ी वस्तु को सरलता से देख पाता है परन्तु छोटी-छोटी वस्तु को देखने में उसे कठिनाइयाँ आती है। इतना ही नहीं वह बड़ी वस्तु, बड़ी घटना से अधिक प्रभावित होता है परन्तु विशेष व्यक्ति/समीक्षक/वैज्ञानिक गुण दोषों के विश्लेषण से ही निर्णय लेते हैं। समुद्र में प्रचुर जलराशि होते हुए भी मनुष्य प्यास बुझाने के लिए समुद्र का पानी पान करेगा तो उसकी प्यास और भी बढ़ेगी। स्वच्छ प्रवाहित नदी में कम पानी होते हुए भी उस पानी के सेवन से प्यास शान्त होगी। इतना ही नहीं समुद्र दूर से देखने में सुन्दर, उसकी आवाज कर्णप्रिय, आकार, में विशाल और पानी स्वच्छ दिखाई देते हुए भी उसके गर्भ में भयंकर हिंस्र-जल-जन्तु, बड़वानल, गह्वर (गड्ढा) पर्वत, हिमशैल होते हैं। इसी प्रकार कुछ व्यक्ति बाह्य से बड़े दिखाई देते हुए भी अन्तरंग में क्रूर, शोषणकारी, अनुदार, अहंकारी, धूर्तादि दुर्गुणों से युक्त होते हैं। सामान्यतः जिसके पास धन, वैभव, सत्ता, पद, बुद्धि, बलादि में से कुछ उपलब्धि या सर्व उपलब्धि होने पर उसे बड़ा महान् मान लेते हैं परन्तु उन उपलब्धियों के कारण वह महान् न बनकर क्षुद्र, दानी न बनकर शोषणकारी, दूसरों की सेवा न करके दूसरों को अपना सेवक बनाता है। इसलिए तो कबीर दास ने कहा था-

बड़ा हुआ तो क्या हुआ जैसे पेड़ खजूर।
पंथी को छाया नहीं फल लागे अति दूर।।

जिस प्रकार जो चुम्बक अधिक शक्ति शाली होता है वह अधिक लोह-खण्डक को तथा अन्य छोटे-छोटे चुम्बक को अपनी ओर आकर्षित करता है, इसी प्रकार जिसके पास धनादि होता है वह दूसरों को दान, सहायता देने के परिवर्तन में दूसरों से अधिक शोषण करता है और सहायता प्राप्त करना चाहता है। जिस प्रकार विशाल बरगद, आम आदि वृक्ष के नीचे जो वृक्ष होते हैं उसकी विशेष वृद्धि नहीं होती है क्योंकि बड़ा वृक्ष अधिक से अधिक सूर्य किरण,

प्राणवायु, भोजन को स्वयं ग्रहण कर लेता है जिससे नीचे के छोटे वृक्षों को पर्याप्त मात्रा में भोजनादि नहीं मिलता है। इसी प्रकार जो जिस-जिस क्षेत्र में प्रभावशाली/बड़ा होता है वह उस-उस क्षेत्र से सम्बन्धी तत्त्वों को अधिक से अधिक शोषण करके दूसरों को उससे वंचित रखता है।

जो बल सम्पन्न होता है वह बल के जोर पर दूसरों को लूटता, कष्ट देता है। यथा-डाकू, चोर, आक्रमणकारी, आतंकवादी, सामन्त, राजा, महाराजा, चक्रवर्ती आदि। अधिकांश राजादि ने अपनी महत्ता बढ़ाने के लिए दूसरों के राज्य को बलपूर्वक लूटा, दूसरों की धन सम्पत्ति के साथ-साथ दूसरों की माँ, बहन, पत्नी का अपहरण किया, उनके साथ बलात्कार किया, प्रजा से अधिक कर वसूल किया। जिस प्रकार परोपजीवी वनस्पति (निर्मूली, आकाशवेलादि) दूसरों वृक्षों के ऊपर उगकर उनका ही शोषण करके बढ़ती हैं उसी प्रकार बड़े कहलाने वाले परोपजीवी दूसरों का शोषण करके बड़े होते हैं। जो राजादि स्वयं परिश्रम करके एक अनाज का दाना तक उत्पादन नहीं करते हैं उनके परिवार के प्रत्येक सदस्यों के लिए अलग-अलग महल, यान, वाहन, हाथी, घोड़ा, पलंग, उपवन, क्रीड़ाभवन, अलंकारादि आते हैं तो कहाँ से? भोगते-भोगते शेष रहे जूठन के समान कुछ सम्पत्ति दूसरों को देकर या धर्मस्थलादि का निर्माण करके स्वयं को धार्मिक दृष्टि से भी महान् सिद्ध करना चाहते हैं, इसी प्रकार आधुनिक नेता, उद्योगपति, सेठ, साहूकारादि भी है।

वर्तमान के अधिकांश नेता पहले तो गरीब रहते हैं। एम.एल.ए., एम.पी. या मंत्री आदि बनते ही अमीर कैसे बन जाते है? जिस प्रकार खटमल, पलंग खाटादि में अनेक दिनों तक कुछ खाये बिना चिपटा, सूखा, मरा सा दिखाई देता है परन्तु रात को दूसरों का खून पीकर लालटक, मोटा ताजा बन जाता है उसी प्रकार राजनेताओं के हाल हैं। नेता बनते ही उन्हें दूसरों को शोषण करने का एक पर्याप्त क्षेत्र मिल जाता है। जनता की सेवा के बहाने तो नेता बनते हैं परन्तु जनता की सेवा तो दूर रही, जनता को अपनी दासी के समान बनाकर उनके बलपूर्वक सेवा करवाते हैं। चुनाव के समय जो व्यक्ति ग्राम-ग्राम में जनता से मिलकर उन्हें प्रणाम कर, उनके पैर पकड़कर वोट की/सत्ता

की भीख माँगता है वही भिखारी आगे जाकर अपने मालिकों को/दानदाताओं को/नागरिकों को भिखारी बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ता है। वोटिंग में नागरिक अपना मत का दान (मतदान) करता है या अपनी शक्ति को नेता को देता है इसलिए यह एक दान प्रक्रिया है अथवा निर्बल व्यक्ति को शक्ति प्रदान करके शक्तिशाली बनाना है। परन्तु इस प्रक्रिया को चुनाव में लड़ना कहते हैं। क्योंकि वस्तुतः अभी मतदान के परिवर्तन में लड़ना, युद्ध, हिंसा अधिक होती है। कितनी विडम्बना है कि जो दानदाता उपकारी होता है उसके उपकार के बदले कृतघ्न नेता उनका अपकार करते हैं। भोली, भाली मूर्ख प्रजा भी ऐसे दुष्ट नेताओं को महान्/बड़ा महान् मानती है, जय-जयकार करती, सहायता करती है, सिर पर चढ़ाती है।

मेदवृद्धिवाला शरीर देखने में बड़ा दिखाई देता है परन्तु वह शरीर अधिक रोगों का घर बना रहता है, कार्य करने में स्फूर्तिला नहीं रहता है उसी प्रकार जो धनवान् होता है उसे लोग बड़ा पुण्यात्मा, दानी, सुखी मान लेते हैं परन्तु अधिकांश धनी शोषणकारी, धोखाधड़ी करने वाले दिन के सफेदपोश चोर-डाकू, कंजूस, लोभी, ईर्ष्यालु, धूर्त, अनुदार गरीब, स्व-नौकरों को चूसने वाले और अनेक पाप कर्म में लिप्त पाये जाते हैं, वे सामाजिक, धार्मिक, मानव सेवादि कार्य से दूर रहते हैं, या विरोधादि भी करते हैं परन्तु उन कार्यों का श्रेय प्राप्त करना चाहते हैं। धन के बल से विभिन्न क्षेत्र के नेता, पदाधिकारी बनकर उससे स्वयं की स्वार्थ-सिद्धि करने में लगे रहते हैं। विशेष कार्यक्रम में माईक में कुत्तों के जैसे भौंकते रहेंगे, गधे के जैसे रेंगते रहेंगे। दूसरों से फूलमाला पहनना, फोटो खिंचवाना, दूरदर्शन में, अखबार में स्वयं की फोटो छपवाना ही अपना कर्त्तव्य मान लेते हैं। मेरा स्वयं का अनुभव है कि जब साधु सन्त जिस ग्राम में कुछ दिन निवास करते हैं उस ग्राम के सेठ, नेता या धार्मिक पदाधिकारी या सामाजिक कार्यकर्ता साधु की सेवा नहीं करते हैं, उन्हें आहार नहीं देते हैं, उनके उपदेश भी सुनने नहीं आते हैं, परन्तु ऐसा दिखावा दिखायेंगे, ऐसे भाषण झाडेंगे जैसे वे साधु के लिए तन-मन-धन और समय से समर्पित हैं। धार्मिक कार्यों के लिए भी धन का खर्च वे बहुत कम करते हैं। ऐसे व्यक्ति जन सामान्य

के साथ मिलना, उनके सुख-दुख में सहभागी बनना, उनकी सहायता एवं सेवा करना अपना दुर्भाग्य मानते हैं परन्तु बखान करेंगे जैसे उनके लिए अहोभाग्य का कार्य है। वे जन साधारण से दूर रहना, अलग-अलग दिखाई देने में अपना बड़प्पन मानते हैं।

साधारण व्यक्ति मानते हैं कि बुद्धिजीवी लोग अच्छे होते हैं। जैसे स्वतंत्रता संग्राम के समय में नेताओं को महान् मानते थे। अधिकांश बुद्धिजीवी में लोमड़ी के जैसी थोड़ी बहुत बुद्धि होती है परन्तु वे हृदय शून्य होते हैं। लोमड़ी जिस प्रकार अपनी बुद्धि से अपनी चालाकी से दूसरों को ठगती रहती है और बिना परिश्रम किये ही अपना काम चलाती रहती है, उसी प्रकार ये परोपजीवी, बुद्धिजीवी लोग भी बिना परिश्रम किये बौद्धिक क्षमता से दूसरों को ठग करके, धोखाधड़ी करके स्वयं को श्रेष्ठ सिद्ध करते रहते हैं। उदाहरण-स्वरूप वकील एवं न्यायाधीश बुद्धिजीवी लोग सत्य को असत्य और असत्य को सत्य करके दूसरों को खून पीते रहते हैं। इंजीनियर, ठेकेदार, करोड़ रुपये के निर्माण कार्य में कुछ लाखों रुपया लगाकर सीमेन्ट, लोहा, पत्थर, ईंट, और तारकोल तक खा जाते हैं। जैसे कि अभी के नेता लोग, पशुओं का चारा तक खाने लगे हैं। कुछ लेखक रूपी बुद्धिजीवी अवास्तविक, अतिरंजित पुस्तक, उपन्यास, नाटक, सिनेमा की रचना करके अनैतिकता, अवास्तविकता, हिंसा, चोरी, डकैती आदि कार्यों को प्रोत्साहित करते रहते हैं। जिस प्रकार एम.एफ. हुसैन ने स्वयं को आधुनिक बुद्धिजीवी एवं श्रेष्ठ कलाकार सिद्ध करने के लिए सरस्वती, दुर्गा आदि स्त्री पात्रों को नग्नरूप में चित्रित किया है। बुद्धिजीवी लोग अधिकांश रोबर्ट (यंत्रमानव) की तरह होते हैं जिस प्रकार यंत्रमानव को विद्युत् शक्ति से संचालित करने पर वह कार्य करता है परन्तु बीच में यदि कोई मनुष्य भी आयेगा तो उसे पकड़कर दबोचकर फेंक देगा क्योंकि उसमें हिताहित विवेक, दया, करुणा या हृदय नहीं होता है। उसी प्रकार बुद्धिजीवी रूपी यंत्र मानव बुद्धिरूपी विद्युत् शक्ति से कार्य तो करते हैं परन्तु उनमें दया, करुणा, प्रेम, वात्सल्य, परोपकार रूपी हृदय नहीं रहता है। जिससे वे स्वयं की स्वार्थसिद्धि करने में निष्णात रहते हैं परन्तु स्वार्थसिद्धि के मार्ग में जो भी

आड़े आते हैं उसे पीस डालते हैं। ये लोग सफेद पोश साक्षर नौकर होते हैं। जिस प्रकार बगुला दिखने में सफेदपोश होता है, उसका हृदयकाला होता है वैसे ही ये बुद्धिजीवी लोग होते हैं। ये भी आम आदमी से स्वयं को पृथक् रखना अपनी महानता का परिचय मानते हैं। किसी भी कार्य में तर्क-वितर्क करना, कमी को ढूँढना इनके लिए टाइम पास मूँगफली है। इसके बिना उनका खाया हुआ भोजन पचता नहीं है। **''वे बोलेंगे मन (मण) भर परन्तु करेंगे नहीं कण भर''**। अनुभव से पाया जाता है कि केवल लौकिक बुद्धिजीवी ही उपर्युक्त दोष से युक्त नहीं होते हैं परन्तु धार्मिक बुद्धिजीवी भी उपर्युक्त दुर्गुणों से युक्त होते हैं और भी कुछ अन्य दुष्प्रवृत्तियों में भी वे लिप्त पाये जाते हैं। ये स्वयं को बुद्धिजीवी के साथ-साथ धार्मिक मानकर अधिक घमण्डी हो जाते हैं। अपनी कमी को छिपाने के लिए मायाचारी, धूर्तता, झूठ आदि का भी सहारा लेते हैं। भोले-भाले धर्म भीरू लोगों को मनमाना ठगते रहते हैं। दूसरों के विद्यमान-अविद्यमान, धार्मिक कमी निकालकर उन्हें अपनामित करते हैं, उनके विरूद्ध में जंग छोड़ देते हैं। ये स्वयं तो दान, सेवा, पुण्यकार्यादि नहीं करते हैं परन्तु स्वयं के लिए दूसरों से करवाते रहते हैं।

पिता-माता-बच्चों का पालन पोषण, शिक्षा-दीक्षा, संस्कारादि इसलिए करते हैं कि बच्चे आगे जाकर बड़े होकर हमारी सेवा करेंगे, धर्म में अपना योगदान देंगे, राष्ट्र की सेवा करेंगे। परन्तु वही बच्चे अधिकतर आगे बड़े होने के बाद, शादी के बाद या कोई नौकरी करने के बाद उपर्युक्त करने के बाद उपर्युक्त उद्देश्य से विपरीत माता-पिता से भी नौकर के समान व्यवहार करते हैं उनसे सेवा करवाते हैं, धर्म, सदाचार एवं संस्कार के विरुद्ध चलते हैं और राष्ट्र को भ्रष्ट करने में कटिबद्ध हो जाते हैं। बाल्यावस्था में जो सरलता, सहजता, सत्यवादिता, नम्रतादि गुण होते हैं उसे और भी बढ़ाना चाहिए परन्तु बड़े होने पर उपर्युक्त अच्छे गुणों से विपरीत कुटिलता, धूर्तता, मिथ्यावादिता, उत्शृंखलता आदि दुर्गुणों को अपनाते हैं।

इतिहास के अध्ययन से और अनुभवरूपी पाठशाला से ज्ञात होता है कि सामाजिक कार्य में, धार्मिक कार्य में, राष्ट्रीय कार्य में सामान्य व्यक्तियों का

जितना महत्त्वपूर्ण व्यापक योगदान रहता है उतना योगदान तथा कथित बड़े व्यक्तियों का नहीं रहता है। खाद्य उत्पादन में कृषकों का योगदान है तो खान, फेक्टरी, रोड़, केनाल आदि निर्माण में श्रमिकों का योगदान है तथा सफाई में दलित वर्गों का योगदान है। गृह निर्माण, फर्निचर, गृहोपयोगी उपकरण, बर्तन, वस्त्र आदि निर्माण सामान्य व्यक्ति करते हैं। धार्मिक, सांस्कृतिक कार्य में साधारण जन ही अति उत्साह से बढ़-चढ़कर भाग लेते हैं। साधुओं की सेवा, उनकी व्यवस्था, उन्हें आहार देना, उनका प्रवचन सुनना एवं प्रवचन के अनुसार जीवन को आदर्श बनाना साधारण जन अधिक करते हैं। राष्ट्र के निर्माण में साधारण जनों का ही योगदान महत्त्वपूर्ण रहता है। राणाप्रताप की सहायता भीलों ने की, शिवाजी की सहायता मवलों ने की, तथा स्वतंत्रता का संग्राम सामान्य नागरिकों ने लड़ा। अनेक राजपूत, राजा तो अकबर के दास बनकर भारत की शान, मान, स्वाधीनता, शौर्य, वीरत्व के प्रतीक स्वरूप महाराणा प्रताप से वैर करते रहे, लड़ते रहे, उन्हें पराजित करने के लिए तथा उन्हें मारने के लिए प्रयत्नशील रहे ऐसे देशद्रोही, स्वाधीनता के विरोधी कृतघ्न, कायरों को संकीर्ण स्वार्थ के कारण मालूम नहीं पड़ता था कि हम अकबर का पक्ष लेकर एक आक्रमणकारी, भारतीय शान, बान, आन, सभ्यता, संस्कृति धर्म के विध्वंसक का पक्ष ले रहे हैं। और प्रताप का विरोधी बनकर मातृभूमि की शान, बान, आन, सभ्यता, संस्कृति धर्म के विध्वंसक बन रहें हैं। ऐसा ही स्वतंत्रता के संग्राम में भी कुछ संकीर्ण स्वार्थी, बुद्धिजीवी, उद्योगपति, व्यापारी, राजनेता, नौकरशाही भी अंग्रेजों के पक्ष में थे और मातृभूमि की स्वतंत्रता तथा स्वतंत्रता प्रेमियों के विरोध में थे। अभी भी स्वतंत्र भारत में वही कलंकित परम्परा को वहन करने वाले राजनेता, मंत्री, नौकरशाही, उद्योगपति, वकील, न्यायाधीश, पुलिस, डॉक्टर आदि ने जीवित रखा है, समृद्ध किया है। जो भारत पहले धर्मप्रधान, विश्वगुरु, दूध की नदी बहाने वाला, सोने की चिड़िया वाला देश कहलाता था आज वही देश तथाकथित बड़े कहलाने वाले नेतादि के कारण भ्रष्टाचार-प्रधान, अशिक्षित, खून की नदी बहाने वाला भिखारी देश हो गया। आज भी देश के सामान्य नागरिक बड़े कहलाने वालों से बहुत अच्छे हैं।

आज सामान्य जन राजनेताओं को देश के सबंसे बड़े शत्रु मान रहे हैं, न्यायालय को अन्यायालय मानकर कष्ट सहन करते हुए भी न्यायालय का मुँह देखना नहीं चाहते हैं, देश की आर्थिक समृद्धि करने वाले उद्योगपति, व्यापारी को देश को लूटने वाले चोर, डाकू मान रहे हैं।

भले सामाजिक हो या धार्मिक अथवा राष्ट्रीय कार्य इसमें बड़े कहने वाले केवल उद्घाटन, समारोह, उत्सवादि में भाग लेकर माला पहनेंगे, भाषण झाड़ेंगे, फोटो खिचवायेंगे परन्तु उस कार्य में थोड़ा भी सक्रिय भाग नहीं लेंगे। जिसको कृषि सम्बन्धी थोड़ा भी ज्ञान नहीं है वह भी कृषि मंत्री बन जाता है, पर्यावरण मंत्री केवल स्वयं का वृक्षारोपण का चित्र खिचवाकर स्व-कर्त्तव्य की इतिश्री मान लेता है, मंत्री संस्था आदि का उद्घाटन करके उस संस्था का श्रेय प्राप्त कर लेता है। धार्मिक कार्यक्रम में भी जो तथाकथित बड़े लोग बड़े-बड़े धार्मिक कार्यक्रम में माला पहनने के लिए, नाम कमाने के लिए, फोटो खिंचवाने के लिए तो आगे-आगे आयेंगे, परन्तु धर्म से, दान से, सेवा से, गुरु भक्ति से, आहार दान से दूर से दूर रहेंगे।

स्वयं को बड़े कहलाने वाले, अधिकांश राजनेता, धार्मिक नेता, सामाजिक नेता, शिक्षित व्यक्ति, नौकरशाही, धनी व्यक्ति, नगरवासी आदि में असामाजिकता, आलस्यपन, धोखा-धड़ी, धूर्तता, संकीर्णता, स्वार्थनिष्ठा, अहंभाव, असेवाभाव आदि दुर्गुण पाये जाते हैं। तो इससे विपरीत सामान्य व्यक्ति में सामाजिकता, कर्त्तव्य-निष्ठा, सरलता, मृदुता, उदारता, स्वार्थत्याग, विनम्रता, परदुःखकातरता आदि गुण पाये जाते हैं। इसलिए केवल बाह्य दृष्टि से कोई बड़ा है तो वस्तुतः वह महान् होगा कोई जरूरी नहीं है। महान् वह है जिसके आचार-विचार, व्यवहार महान् हों। कहा है कि-

उन्नतं मानसं यस्य, तस्य भाग्य समुन्नतं।
नोन्नत मानसं यस्य तस्य भाग्य असमुन्नतम्।।

अर्थात् जिसकी भावना उन्नत/उदार है उसका भाग्य/कर्म उन्नत है जिसकी भावना संकीर्ण है उसका भाग्य/कर्म नीच है।

प्रकरण - 4

नगर की समस्याएँ- (कारण एवं निवारण)

(-नगर बनाम नरक-)

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज की सहायता से उसका शारीरिक, भौतिक, बौद्धिक, पारिवारिक विकास होता है। पशु तो जन्म के कुछ समय के बाद स्वयं चलना, खाना, जीना सीख लेता है परन्तु मनुष्य को उपर्युक्त कार्य करने में पशु की अपेक्षा अधिक देरी लगती है। नर शिशु, पशु-शिशु से जन्म के समय अधिक दुर्बल रहता है इस अवस्था में उसका पालन-पोषण दूसरों के द्वारा होता है। कुछ बड़ा होने पर शिक्षा-दीक्षा के लिए गुरु, विद्यालय, पुस्तकादि की आवश्यकता होती है, युवक होने पर विवाह करता है। स्व तथा परिवार के भरण-पोषण के लिए भौतिक वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है। इस आवश्यकता की संपूर्ति के लिए कृषि, सेवा, वाणिज्यादि करता है। इन कार्यों के लिए भी भौतिक साधन तथा जैविक साधन की आवश्यकता पड़ती है, इसलिए वह सामूहिक रूप में रहता है। परन्तु प्रकृति की गोद में प्राकृतिक जीवन जीने वाला मनुष्य (भोग-भूमिज) ग्राम, नगर बनाकर नहीं रहता था। भोग भूमि में प्राकृतिक रूप से कल्पवृक्षों से जीवनोपयोगी सामग्रियाँ मिलती थी। परन्तु कालक्रम से प्राकृतिक रूप से मिलने वाली सामग्रियों की कमी से कर्मभूमि में मनुष्य को कृषि, वाणिज्य, पशुपालन, शिल्प, सेवा, उद्योगादि की आवश्यकता पड़ी। यहाँ से ही परिवार, समाज, ग्राम, नगरादि का निर्माण होना प्रारम्भ हुआ। सामूहिक रूप से रहने से भौतिक आदान-प्रदान भी हुआ। इससे मनुष्य ने तीव्रता से हर दृष्टि से विकास किया। सामूहिक बल से विभिन्न ज्ञान-विज्ञान, आध्यात्म, शिल्प, कला, स्थापत्य, परम्परा सम्बन्ध का जन्म एवं प्रचार-प्रसार हुआ। इसके फलस्वरूप आर्य सभ्यता, सिन्धु सभ्यता, मोहन-जोदड़ो-हडप्पा-सभ्यता, ग्रीक सभ्यता, नागरीय सभ्यता, ग्रामीण सभ्यतादि का जन्म हुआ।

समूह में रहने से तो मनुष्य को कुछ लाभ होता है तो कुछ हानियाँ भी

होती हैं। जब भोग-भूमि में मनुष्य प्रकृति की गोद में प्राकृतिक साधनों से जीवन जीता था तब वह सरल, सहज, निरोगमय जीवन जीता था। कर्म भूमि में प्राकृतिक संसाधनों की कमी के कारण उसे विभिन्न संघर्ष एवं व्यापार करना पड़ा। इससे उसके अन्दर सक्रियता, संघर्ष करने की क्षमता, बुद्धिमता, सुख प्राप्त करने की भावना तथा उसे प्राप्त करने की शोध-बोध की प्रणाली जागृत हुई। परन्तु इसके साथ-साथ भौतिक वस्तुओं को प्राप्त करने की लालसा, तृष्णा बढ़ी तथा परस्पर में प्रतिस्पर्धा, ईर्ष्या, द्वेषादि भाव बढ़े। इसके फलस्वरूप परस्पर में संघर्ष, छीना-झपटी, लूट-पाट, चोरी, डकैती, धोखा-धड़ी, युद्ध-कलह, हत्या, अत्याचार, भ्रष्टाचार बढ़े। जहाँ अधिक से अधिक मनुष्य एकत्रित रहने लगे वहाँ अधिक से अधिक उपर्युक्त दुर्गुण बढ़ने लगे। जो अधिक से अधिक भौतिक साधन संग्रह करने लगा उसके अन्दर उपर्युक्त दुर्गुण अधिक से अधिक बढ़ने लगे। पुराण साहित्यों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि साधन सम्पन्न राजा दूसरों के राज्यों को जीतकर अपने राज्य में मिलाता था, दूसरों को लूटता था, हत्या-अत्याचार करता था जिसे दिग्विजय, राज्य-विस्तार, राजसूय-यज्ञादि उपाधियों से, शब्दावली से महिमा-मण्डित करते थे जो षट्खण्ड-पृथ्वी को जीतता था वह चक्रवर्ती, जो तीन खण्ड पृथ्वी को जीतता था वह अर्द्ध-चक्रवर्ती पदवी से अलंकृत होता था। इसी प्रकार महामण्डलेश्वर, मण्डलेश्वर, महाराजा, राजा, सामन्तादि नीचे-नीचे होते थे। इसी प्रकार एक शक्ति शाली नगर, राज्य या राष्ट्र दूसरे नगरादि को जीतते थे। जैसे ग्रीक के नगर राज्य (एथेन्स-स्पार्टादि) भारत के राजा परस्पर लड़ते थे। सिकन्दर, बाबरादि ने दूसरों के राष्ट्रों को लूटा। इतना ही नहीं, भाई-भाई भी लड़े और एक दूसरों को मारा। यथा-पाण्डव-कौरव, भरत बाहुबली आदि।

दो को द्वन्द्व कहते हैं। द्वन्द्व का अर्थ भी संघर्ष, कलह, युद्धादि है। जब अधिक व्यक्ति मिलते हैं द्वन्द्व की संख्या बढ़ती है तो उसके अर्थ की गुणवत्ता (संघर्षादि) भी बढ़ती है। पुराणादि के शोधपूर्ण अध्ययन से बोध होता है कि प्राचीन काल से ही नगर में रहने वाले/नागरिक द्वन्द्व, संघर्ष, युद्ध, कलह, विग्रह, फूट, जूआ, सुरा, सुन्दरी, शिकारी में लिप्त रहते थे। उसमें भी अधिक

सम्पन्न, प्रभावशाली, सत्ताधारी उपर्युक्त दुष्कार्य में अधिक लिप्त होते थे।

प्राचीन काल में नगर एवं नागरिकों के जो दुष्कार्य हैं उसे तो हम पुराण, इतिहासादि से अध्ययन करते हैं परन्तु हम प्रत्यक्षदर्शी नहीं हैं। किन्तु अभी नगर में जो दुष्कार्य हैं उन्हें देखकर एवं अनुभव कर हमें विश्वास हो जाता है कि संभवतः पहले नगर में दोष होते थे। मैंने जो बाल्यावस्था से अभी तक 10-11 प्रदेशों के डगर-डगर, ग्राम-ग्राम, नगर-नगर में परिभ्रमण करके परिशीलन किया उसके आधार पर एवं अध्ययन के बल पर मैं यह सब लिख रहा हूँ।

जिस प्रकार उपर्युक्त दूरी पर वृक्ष होने पर वे योग्य जल-वायु-सूर्य किरण प्राप्त करके समुचित विकास करते हैं परन्तु अति पास-पास में वृक्ष होने पर उन्हें समुचित जलादि नहीं मिलने के कारण उनका विकास उत्तम रीति से नहीं होता है। इतना ही नहीं जो बड़ा एवं समर्थ वृक्ष होता था वह पृथ्वी से अधिक भोजन शोषण कर लेता है, जिससे पास के अन्य छोटे तथा असमर्थ वृक्षों को पर्याप्त भोजन नहीं मिलता है। बड़े वृक्षों के नीचे जो वृक्ष होते हैं उन्हें समुचित सूर्य-किरण भी नहीं मिलती है। इससे अनेक छोटे-छोटे वृक्ष दुर्बल हो जाते हैं तो कुछ मर भी जाते हैं। मरे हुए वृक्ष की जब खाद बन जाती है तो वह बड़ा वृक्ष उसे भी भोजन रूप से शोषण कर लेता है। घने जंगल में अनेक भयंकर जीव-जन्तु, कीट पतंग होते हैं, चोर, डाकू भी वास करते हैं। कुछ वृक्षों में चढ़ने वाली लतायें भी उन बड़े-बड़े वृक्षों में चढ़ जाती हैं, जिससे जंगल और भी अधिक दुर्गम एवं भयंकर बन जाता है। उसी प्रकार जहाँ जनसंख्या कम होती है वहाँ अधिक विषमता, समस्या, कुप्रवृत्ति कम होती है परन्तु जहाँ जनसंख्या अधिक होती है वहाँ विषमतादि बढ़ जाती है। उस जन-जंगल (नगर) में जो अधिक शक्तिशाली, समर्थ, प्रभावशाली होता है तो वह दूसरों का शोषण करता है, दूसरों को बढ़ने नहीं देता है। अट्टालिकाओं के जंगल में चोर-डाकू, भ्रष्टाचारी, बलात्कारी, शोषणकारी मनुष्य रूपी हिंस्र पशु-पक्षी, कीट-पतंग जन्म ले लेते हैं। बड़ों के आश्रय लेने वाली चापलूसी, धोखाधड़ी करने वाली मनुष्य रूपी लतायें जन्म लेती हैं एवं वृद्धि को प्राप्त करती हैं।

घना जंगल, दुर्गम भयंकर होने के कारण उसमें हिंस्र-पशु, डाकू, चोर,

असभ्य, म्लेच्छ लोग रहते हैं उसी प्रकार घनीं वसति रूपी जंगल में शोषणकारी, चोर डाकू, ठगी, घोटाले करने वाले दो पैर वाले हिंस्र पशु आदि रहते हैं।

धार्मिक साहित्य में वर्णन पाया जाता है कि नरक में असंख्य नारकी होते हैं। परन्तु वे परस्पर सहकार, उपकार, सहायता तो नहीं करते हैं किन्तु परस्पर को सर्वथा कष्ट देने में ही जीवन भर सतत् प्रयासरत रहते हैं। जब एक नवीन नारकी नरक में जन्म लेता है तब अन्य नारकी उसको देखते ही उसके पास दौड़कर जाते हैं। वहाँ जाकर अपने शरीर को ही तलवार, भाला, अग्नि, बिच्छू, गीध पक्षी, सर्प, काँटेदार शेमर वृक्ष, तप्त वैतरणी नदी आदि बन करके परस्पर को कष्ट देते हैं। नारकी का जन्म घड़ियाल आदि के मुख के समान भयंकर एवं कष्ट प्रद स्थान में होता है। जन्म लेते ही वे ऊपर से नीचे गिरते हैं। जहाँ गिरते हैं वहाँ तीक्ष्ण अस्त्र-शस्त्र होते हैं। जिसके कारण उनका शरीर छिन्न-भिन्न हो जाता है। जमीन के स्पर्श से ही सैकड़ों बिच्छू काटने पर जो पीड़ा होती है वैसी पीड़ा होती है। नकर में इतनी उष्णता है कि वहाँ विशालकाय लोहपिण्ड भी जमीन के स्पर्श के पहले ही पिघल जायेगा।

इस नरक का स्वरूप प्रत्यक्ष रूप से कुछ अंश में नगर में पाया जाता है। नगर में मोटर, फेक्ट्री, अधिक संख्या में होने के कारण शब्द प्रदूषण, वायु-प्रदूषण, जल-प्रदूषण, मृदा-प्रदूषण और गरमी के कारण भौतिक दृष्टि से नगर नरक है तो परस्पर के घृणा, असहकार, शोषणादि रूपी भाव प्रदूषण के कारण भावात्मक दृष्टि से भी नगर नरक है। भौतिक प्रदूषण के कारण नगर का स्पर्श ही शारीरिक स्वास्थ्य नष्ट के लिए कारण बनता है। गन्दगी के कारण नगर में विषाक्त मच्छारादि कीट-पतंग बहुत होते हैं जो कि मनुष्य को काटते हैं। जिससे अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। नगर के लोग विशेषतः परोपजीवी होते हैं। अतः वे परस्पर आर्थिक रूप से शोषण करते हैं। इसलिए वे विभिन्न रूप स्वांग/रंग-ढंग धारण करते रहते हैं। नगर में गटर-नाला रूपी वैतरणी नदी बहती है।

नरक में नारकियों की संख्या बहुत होते हुए भी वे सब असहाय, दीन-हीन होते हैं। वे परस्पर तो उपकार नहीं करते हैं परन्तु वे परस्पर को कष्ट देने

में ही लगे रहते हैं। उसी प्रकार नगर में जनसंख्या तो अधिक रहती है परन्तु वे एक-दूसरों को पहचानते तक नहीं तथा एक दूसरों की सहायता नहीं करते हैं। गाँव में किसी के ऊपर संकट आने पर सब मिल करके उसकी सहायता करते हैं, सुख-दुःख में सहभागी होते हैं, परन्तु इसके विपरीत नगर में एक ही फ्लैट या बिल्डिंग में रहने वाले भी संकट के समय में एक दूसरों की सहायता नहीं करते हैं। गाँव में कोई अतिथि या साधु-संत आने पर सभी ग्रामवासी मिलकर अति-आदर भक्ति से उनकी सेवा व्यवस्था में लगे रहेंगे परन्तु प्रायः नगर वाले पानी के लिए भी नहीं पूछते हैं।

नगर में जल, भूमि, वायु, भोजन आदि सब प्रदूषित एवं कृत्रिम होने के का कारण वहाँ का भोजन न रुचिकर न पौष्टिक होता है, ना वायु में ताजगी होती है, ना जल स्वच्छ एवं जीवनदायी होता है, न भूमि सुगंध युक्त पवित्र होती है। इतना ही नहीं, इस कृत्रिम वातावरण में रहने-पलने वाले भी कृत्रिम, दूषित, रसहीन, ताजगी-हीन, सत्वरहित, निष्प्राण से होते हैं। वे धुले कपड़े पहनकर, निष्तेज होंठ में खून की लिपिस्टीक लगाकर तथा मुरझाये हुए गाल में हड्डी का पावडर लगाकर, तेजहीन नाखून में नेल-पॉलिश लगाकर, निर्मम रूप से मारे हुए पशु-पक्षी के अवयव से बने हुए प्रसाधन सामग्रियों को धारण कर बक राक्षस जैसा व्यवहार करते रहते हैं।

नगर में भौतिक साधनों की प्रचुरता होने से, यातायात के साधन अधिक होने से नगरवासी भौतिकवादी, यान्त्रिक होते हैं, इसके कारण उनमें प्राकृतिकता, सहज, सरलता कम होती है तथा स्वावलम्बन, सक्रियता में बहुत पिछड़े होते हैं। इससे उनमें अनेक भावात्मक, नैतिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, शारीरिक विकृतियाँ आ जाती हैं। इन विकृतियों से ग्रसित होते हुए भी वे भोले-भाले, सरल-सहज ग्रामवासियों को गंवार (मूर्ख, असभ्य, अशिक्षित) गन्दे, निकम्मे, (निष्क्रिय, उद्योगहीन) मानते हैं।

प्रत्येक राष्ट्र सांस्कृतिक, सभ्यता, परम्परा की दृष्टि से ग्राम में बसता है परन्तु भारत तो विशेषतः ग्राम में ही बसता है, क्योंकि यह कृषि-प्रधान, ऋषि प्रधान वृष (धर्म) प्रधान देश हैं। भारत सांस्कृतिकादि दृष्टि से ग्राम में होने के

साथ-साथ भारत कृषि प्रधान देश होने के कारण भारत कृषि उत्पादन (अनाज, तिलहन, कपास, गन्ना, गुड़, फल, शाक-सब्जी) तथा पशु उत्पादन (दूध,दही, मट्ठा, घी, मक्खन, गोबर, ऊन) के लिए भी ग्राम के ऊपर निर्भर हैं। यदि ग्राम के उपर्युक्त योगदान को निकाल दिया जायेगा, तो भारत एक कृत्रिम अलंकार से अलंकृत शव के समान हो जायेगा।

नगर में उपर्युक्त जीवनोपयोगी प्राकृतिक सामग्रियों का उत्पादन नहीं होने के कारण नगरवासी पूर्ण रूप से उपभोक्ता/परोपजीवी/ परावलम्बी होने के कारण उन्हें उन सामग्रियों को अर्थ से क्रय करना पड़ता है। इसलिए वे अर्थ कमाने में सतत प्रयत्नशील रहते हैं। उपर्युक्त सामग्रियाँ दूर-दूर से नगर में आने के कारण, नगर की जनसंख्या अधिक होने के कारण तथा माँग अधिक होने के कारण मूल्य भी अधिक होता है। नगर में घर, दूध, घी, शाक-सब्जी, से लेकर जल तक क्रय करना पड़ता है। इसलिए नगरवासियों को अधिक धन-अर्थ की भी आवश्यकता पड़ती है। इतना ही नहीं वे अधिक भोगवादी ''सुविधाप्रिय, परावलम्बी, फैशनपरस्ती, दिखावा करने वाले होने से भी उन्हें अधिक धन की आवश्यकता पड़ती है।'' इसलिए वे येन-केन प्रकार के अर्थ-शोषण में अधिक लीन पाये जाते हैं। इसलिए उनका जीवन (Busy) होता है परन्तु स्वस्थ्य (Essy) नहीं होता है। वे अत्यधिक भागमभाग, यांत्रिक, तनावयुक्त, थकान सहित जीवन जीते हैं। उनका कार्य क्षेत्र घर से दूर होने के कारण उनको जाने-आने में भी अधिक समय देना पड़ता है और परेशानियाँ उठानी पड़ती हैं। आर्थिक आपूर्ति के लिए महिलायें भी नौकरी करती हैं। इन सब समस्याओं के कारण माता-पिता-सन्तान एक साथ शान्ति से बैठकर परस्पर वार्तालाप, हँसी-खुशी, मनोरंजन नहीं कर पाते हैं। इतना ही नहीं वे पारिवारिक, सामाजिक, सुख-दुःख में भी सहभागी नहीं हो पाते हैं। इसके कारण नगर में लोग मनुष्य रूपी घने जंगल में रहते हुए भी वे एकाकी, निःसहाय, असंगठित, तनावयुक्त खोखले हैं। इसलिए भी नगर में दंगा-फसाद, मार-काट, लूट-पाट, चोरी-डकैती, हत्या, बलात्कारादि अधिक होते हैं। इस नगर-जंगल में किसी के ऊपर आपत्ति आ पड़ने पर दूसरे तो सहायता नहीं करते हैं परन्तु

जानते हुए भी अनजान रहते हैं। परन्तु ग्राम में कोई एक व्यक्ति के ऊपर आपत्ति आने पर अन्य व्यक्ति प्रायः उसकी पूर्ण सहायता करेंगे।

नगर में नारकीय कृत्रिम जीवन तथा ग्राम में साम्य, सुखमय, सरल जीवन होने पर भी अनेक लोग ग्राम छोड़कर नगर की ओर पलायन कर रहे हैं। इसके कारण हैं- नगर में अध्ययन की सुविधा, नौकरी एवं व्यवसाय की सुविधा आदि। परन्तु नगर की समस्याओं के कारण कुछ वर्षों से नगर की ओर पलायन कम होता जा रहा है। इतना ही नहीं नगर की नारकीय-यातनाओं से संत्रस्त होकर नगरवासी नगर से निकलकर नगर के बाहर निवास करने लगे हैं।

नगर की अपसंस्कृत रूपी दूषित वायु के कारण ग्राम के स्वच्छ, सहज-सरल, प्राकृतिक, भौतिक, आर्थिक, भौगोलिक, नैतिक, सांस्कृतिक, सभ्यता रूपी, वातावरण दूषित होता जा रहा है नगरवासी जिस घुटन से ऊबकर ग्राम की संस्कृति को चाहने लगे हैं, आज कुछ ग्रामवासी आधुनिकता के अन्ध-भक्त बनकर जिस अवशिष्ट (जूठन) को नगरवासी छोड़ रहे हैं उसे ग्रहण कर रहे हैं। यह भारतीय संस्कृति के लिए गंभीर आघात है क्योंकि नगरवासी भ्रष्ट होने पर भी भारतीय संस्कृति नष्ट नहीं होगी परन्तु ग्रामवासी भ्रष्ट होने पर भारतीय संस्कृति नष्ट हो जाएगी। कारण कि भारतीय संस्कृति रूपी वृक्ष का मूल ग्राम है। वृक्ष का मूल भाग अधिकांशतः नहीं दिखाई देने पर भी मूल से ही वृक्ष की स्थिति पोषण-समृद्धि होती है। उसी प्रकार भारत की स्थिति, पोषण समृद्धि ग्राम पर आधारित है, इसी ओर सबका ध्यान देना एवं सहयोग करना आवश्यक है।

There are good in bed of us. There are bed in best of us. अर्थात् ''भ्रष्ट में भी श्रेष्ट होते हैं और श्रेष्ट में भी भ्रष्ट होते हैं'' के अनुसार नगर में भी कुछ श्रेष्ठ व्यक्ति होते हैं और ग्राम में भी भ्रष्ट व्यक्ति होते हैं। ग्राम में भी कुछ निष्कृष्ट परम्परा होती है तो नगर में भी कुछ उत्कृष्ट परम्परा होती है। प्रचुरता की दृष्टि से यह वर्णन किया गया है यदि कोई ग्रामवासी भी उपर्युक्त नागरीय दोषों से ग्रसित है तो वह भी वस्तुतः ग्रामवासी कहने योग्य नहीं है।

वह तो और भी भ्रष्ट हैं क्योंकि वह उन दुर्गुणों के कारण स्वयं तो भ्रष्ट है ही तथा भोले-भाले ग्रामवासियों को भी भ्रष्ट करने में योगदान देगा। जैसे के सड़ा-गला फल पास के अन्य अच्छे फलों को भी सड़ाता है।

किसी की निन्दा करने के लिए या नीचा दिखाने के लिए मैंने यह नहीं लिखा है परन्तु गुण-दोष की समीक्षा की है। जैसे स्वयं की चक्षु स्वयं को नहीं देखती है परन्तु दर्पण के माध्यम से स्वयं को देख सकती है, उसी प्रकार स्वयं की गलतियाँ प्रायः स्वयं को नहीं दिखाई देती हैं। उन गल्तियों को दिखाने के लिए मैंने यह दर्पण रूपी लेख आपके सामने प्रस्तुत किया है। विवेकी सज्जन इस लेख रूपी दर्पण से अपने दोषों को देखकर दूर करें यही मेरी पवित्र भावना है। क्योंकि- **''बिन जाने तैं दोष गुनन को कैसे तजिये गहिये''**

आत्मा-विशुद्धि के बिना धर्म के बाह्य स्वरूप को पालन करने वाला स्वयं को श्रेष्ठ मानकर अहंकार करता है, श्रेष्ठता सिद्ध करने वाले के लिए दूसरों को नीच मानता है। दूसरों से घृणा करता है। भेद (फूट) करता है, अहंकार को चोट पहुँचने पर क्रोध करना, प्रसिद्धि के लिए शिष्य-अनुयायी, सम्पत्ति, कीर्ति, नाम, संख्या आदि का लोभ करता है, अन्तरंग की कलुषता/कमी/वास्तविकता प्रगट न हो इसलिए मायाचारी/झूठ/कूट कपट करता है। इसलिए ढोंगी धर्मात्मा सामान्य व्यक्ति से भी अधिक पापी/धूर्त/क्रूर/पतित पाया जाता है।

''आर्य संस्कृति जननी''

(तर्ज- 1. बंगला राग... 2. नरेन्द्र छन्द... 3. जन-गण-मन आदि)

जननी जननी जननी वन्दे! भारत जननी...2
तुम हो आर्य संस्कृति जननी...3 ।।टेक।।
वन उपवन नदी तरंगा, उच्च हिमालय सिन्धु तरंगा... जननी...3

गंगा यमुना धृत शरीरा, शस्य श्यामला भारत माता... जननी...3
तीर्थेश गणधर गुणी जननी, ज्ञानी विज्ञानी ऋषि जननी... जननी...3
चक्री नृप सम्राट दात्री, विश्व गुरु है भारत माता... जननी...3
ज्ञान विज्ञान सभ्यता दात्री, भाषा व्याकरण कला पदात्री... जननी...3
नृत्य संगीत नाटक दात्री, शिल्प राजनीति कानून दात्री... जननी...3
दर्शन तर्क आध्यात्म दात्री, मोक्ष प्रदायिनी भूमि जननी... जननी...3
विदेशी आक्रान्ता भी आए, तेरी महिमा से अभिभूत हुए... जननी...3
जो तेरी संस्कृति पालन करे, वे ही सच्चे तेरे दुलारे... जननी...3
अन्य हैं सब कुपूत समाना, तेरी महिमा को नहीं माना... जननी...3

''मेरे देश की संस्कृति''

(तर्ज- मेरे देश की धरती...)

मेरे देश की संस्कृति ज्ञान दात्री ज्ञानी गुणी जननी... मेरे देश... ।।टेक।।
यहाँ पूजा पाठ रीति-रिवाज ज्ञान ध्यान सिखाते हैं...2
पाप दूर हुए पुण्य प्रकाशे आत्मज्ञान जगाते हैं...2
यहाँ के महापुरुष ज्ञानी विज्ञानी ध्यानी होते हैं...2
जिसके कारण हमारी संस्कृति, श्रेष्ठ संस्कृति कहलाती है...2
मेरे देश की संस्कृति... ।।(1)।।
इसी संस्कृति से जन्म लिए, गणित विज्ञान शिल्पों ने...2
आत्मज्ञान की अमृत वर्षा, इस के ही अवदान है...2
संगीत नाट्य भाषा-विज्ञान, इसका ही योगदान है...2
इसीलिए तो देश हमारा, विश्वगुरु कहलाता था...2
विश्व बन्धुत्व का पाठ पढ़ाकर, विश्व में शान्ति लाता था...
मेरे देश की संस्कृति... ।।(2)।।
हमारे भोजन वेश-भूषा भी, संस्कृति ऋतु से अभिप्रेरित हैं...2

सभ्यता व परम्परा भी, इससे ही खूब प्रभावित है...2
इससे ही हमारी संस्कृति से मानव से भगवान् हुए...2
दानव भी मानव बनकर के, परम्परा से मोक्ष गये...2
इस हेतु ही स्वर्ग के देव भी, इस संस्कृति धरा को चाहे हैं...
मेरे देश की संस्कृति... ।।(3)।।
ऐसी संस्कृति को हे भारतीय ! तुम क्यों भूलते जाते हो...2
मूल से रहित क्या वृक्ष कभी, फूलते फलते जाते हैं...2
पानी से रहित सरिता क्या कभी, भक्तों से पूजी जाती है...2
प्राण से विहीन शरीर क्या, कभी उपयोगी होता है...2
समग्र विकास के हेतु अपनी संस्कृति है उपयोगी...
मेरे देश की संस्कृति... ।।(4)।।

''भो इंडियन इडियट को त्यागकर विश्वगुरु बनो''

(तर्ज- 1. सुनो-सुनो ऐ दुनियाँ... 2. रात कली इक... 3. जीवन में कुछ करना.... 4. नगरी-नगरी)

सुनो इंडियन सुनो हिंग्लिस्थानी, तुम्हारे ढोल की पोल कहानी।
जिसे सुनने की इच्छा न करते, स्वर्ग के देव क्या तिर्यंच प्राणी।। (टेक)
शिक्षा के नाम पे रटन्त तोता, संस्कार संस्कृति चारित्र बिना।
नम्बर आधारित प्रयोग शून्य, जड़-फल रहित वृक्ष है यथा।।
सादा जीवन उच्च-विचार, आध्यात्मभाव विश्वबन्धुत्व।
इससे रहित आडम्बरपूर्ण, फैशन-व्यसन भ्रष्ट चारित्र।। सुनो...
परोपकार व नीति रहित, शोषण मिलावट युक्त व्यापार।
भ्रष्टाचार ही तेरा आचार, धर्म नियम सबसे है दूर।।
महान् भारतीय भाषा भोजन, वेश-भूषा रहित तेरा फैशन।
इसी काम में विश्व चैम्पियन, नीली लोमड़ी न तेरे समान।। सुनो...
अकल बिना नकल में तुझसे, बन्दर तोता गिरगिट हारे।
मौलिक श्रेष्ठ उपकारक शोध, बोध खोज आदि में कोरे।।

गप्पे लड़ाने डिंग हांकने, आलस्य प्रमाद मल फैलाने।
इसके लिये विश्वगुरुत्व, नोबोल प्राप्त योग्यता माने।। सुनो...
आधुनिकता का नशा तुम्हारा, सब नशा सबसे प्यारा।
इसके लिए सभी वर्जनीय, धन, मान, स्वास्थ्य धर्म भी सारा।।
जिस संस्कृति को पाश्चात्य ज्ञानी, श्रेष्ठ मानकर ग्रहण करे।
उस संस्कृति को त्याग करके, अपसंस्कृति पालों क्यों प्यारे।। सुनो...
धर्म अर्थ काम मोक्ष मध्य में, अर्थ काम ही तुमको प्यारे।
गीध पक्षी सम तुम्हारी दृष्टि, भौतिक भोग की सदा निहारे।।
धर्म भी करो उत्सव पालो, पवित्र उदार भावना बिना।
धन मान जन प्रसिद्धि हेतु, धर्म क्यों ओढ़ो भावना बिना।। सुनो...
गुरु कुंभार कुंभ शिष्य सम, गढ गढ काढूँ मैं तेरा खोट।
सुन्दर सुडौल पात्रता हेतु, पवित्र भाव से मारुँ मैं चोट।।
तुम आर्यपुत्र अमृत हेतु, करो पुरुषार्थ सत्य निष्ठा से।
''कनकनन्दी'' की भावना सदा, विश्वगुरुत्व को पाओ शीघ्र से।। सुनो...

''तुच्छ (नीच) व्यक्ति के व्यक्तित्व''

(दुर्जन की आत्मकथा)

(रागः- ऊँचे ऊँचे शिखरों वाला है...)

छोटे खोटे लक्ष्य धारी हैं, ये तुच्छ दुर्जन रे !
दुर्जन तुच्छ, सज्जन वैरी है... छोटे खोटे...(टेक)...
बड़बड़ाने में शुष्क बादल है, दिखावा करने में हाथी के दाँत है
ढपोलशंख सम ये महादानी है, बकरे के गलस्तन सम ज्ञानी है
बगुला समान महाध्यानी ये, बिल्ली समान महाधर्मी है
चालनी समान ये गुणग्राही है, कैंची समान मिलनकारी है... छोटे-खोटे(1)
धर्म मोक्ष बिना अर्थ काम मोही, स्वार्थपूर्ति हेतु सदा आग्रही
परोपदेश में कुशलता भारी, लोमड़ी जिसकी धूर्तता से हारी

क्रोध मान माया लोभ के स्वामी, सत्य तथ्य से जो हैं दूरगामी
अमोघ कठोर वचन के धारी, बिजली समान स्थिर प्रेम धारी... (2)
तोड़-फोड़ के जो अधिकारी, लड़ाई-झगड़ा के प्रिय पुजारी
संक्लेश तनाव में ममताधारी, समता शान्ति के कट्टर वैरी
तिल का ताल (ताड़) वर्णनकारी, घड़ियाली आँसू के (तुम) धारी
खलनायक के उपमाधारी, दुष्टगुणों के तुम भण्डारी... छोटे-खोटे..(3)
पूर्वाचार्यों ने वर्णन भी किया, श्रोता में तुम्हें अयोग्य बताया
दोष वर्णन कर सब को बताया, दुर्गुण त्यागने को प्रेरित भी किया
दुर्गुण दुर्गुणी से सतर्क कराया, मनोवैज्ञानिक पद्धति बताया... (4)
काहूँ न मैत्री है सब से है वैरी, स्वार्थ सिद्धि हेतु वैश्या सम यारी
मान मर्यादा के जो परम वैरी, नीली लोमड़ी सम आडम्बर धारी
मुख में राम बगल में छुरी, दूरस्थ पर्वत सम शोभा के धारी
दुर्जन प्रथम वन्दे अधिकारी, 'कनकनन्दी' इनसे माध्यस्थ धारी... (5)
दर्पण समान काम जो किया, स्व-स्व दोषों/(गुणों) को सब को बताया
दोषों को देखकर उसे मिटाओ, जिससे पतित भी पावन हो
ईर्ष्या द्वेष भाव किसी से नहीं है, सबका मंगल हो यह कामना है
पाप मिटे पापी कदापि नहीं, पाप मिटने से पापी न कोई... (6)

"क्यों करो अभिमान रे!"

(तर्ज- 1. जरा सामने तो आओ छलिये... 2. इस काया...)

रे मानव क्यों करो अभिमान रे!
अनित्य वस्तु में क्यों यह दंभ रे-2 (टेक) रे मानव...
यह देह तो मांस का पिण्ड रे, इसके लिये तू करे घमण्ड रे।
जातिकूल रजवीर्य सम्बन्ध रे, घृणित वस्तु में तेरा ये दंभ रे-2 रे मानव...
सौन्दर्य तो चमड़ी ही मात्र रे, इससे भिन्न तू चैतन्यगात्र रे।
धन से तू ही न मानो धन्य रे, तेरा धन तो शुद्ध चैतन्य रे-2 रे मानव...

तेरी प्रसिद्धि आत्मा की सिद्धि रे, लोक संग्रह नहीं है सिद्धि रे।
त्याग-तपस्या दान के मान रे, पतन ऊँचे वृक्ष सो जान रे।।-2 रे मानव...
ज्ञान का मान अग्नि समान रे, स्वपर दाहक यह कुज्ञान रे।
आयु का मान तेरा अज्ञान रे, तू तो अनन्त अवाहमान रे।।-2 रे मानव...
अक्षय अव्यय वैभव धारी रे, पूर्ण कामा तू आत्मविहारी रे।
तू तो अनन्त ज्ञान घन रे, सत्य शिव सुन्दर तेरा मान रे।।-2 रे मानव...
"कनकनन्दी" तो आह्वान करे तो, विभाव त्यागो स्वभाव वरो रे।
शवत्व त्याग के शिवत्व वरो रे, सच्चिदानंद में रमण करो रे।।-2 रे मानव...

"हिम्मत हो तो मानव"

(तर्ज- जीवन में कुछ करना है तो...)

हिम्मत हो तो मानव आगे-आगे बढ़ते चलना,
सत्य के मार्ग पर पीछे कभी नहीं हटना।। (टेक)
मार्ग में पहाड़ हो तो स्वार्थ के काटो उसे,
जंजीर हो मोह के छिन्न-भिन्न करो उसे,
अन्धेरा हो राह में तो जला डालो तुम उसे,
विघ्न व बाधा आवे नष्ट-भ्रष्ट कर उसे।। (1) हिम्मत...
विषम को समकर आगे बढ़ो भाव से,
विषम के विष को भी अमृत कर दो भाव से,
गिरने से टूटे कांच वज्र कभी नहीं टूटे,
दीपक बुझे हवा से सूर्य कभी नहीं बुझे।। (2) हिम्मत...
ईशा सम क्षमावान् प्रताप सा धैर्यवान्,
विक्रम सा नीतिवान् अभय सा हो बुद्धिमान्,
जम्बूसा हो वैराग्यवान् यथार्थ से हो महान्,
स्वार्थ के बन्धन में स्वयं को न मानो महान्।। (3) हिम्मत...

तुम नहीं महान् हो धन युक्त होने से,
अहंकार ईर्ष्यायुक्त राग द्वेष मोह से,
आहार भोग निद्रा हिंसा में तू है पशु सम,
इससे तू ऊपर उठकर त्याग दे सारे गम
परतंत्रता में कभी कोई नहीं होता महान्
''कनकनन्दी'' के आह्वान से स्वतंत्र बन जाओ इन्सान।। (4) हिम्मत...

''जनसंख्या वृद्धि शहरीकरण की आपदाएँ तथा मुक्ति के उपाय''

सुनो सुनो हे दुनियाँ वाले! निजी दुर्दशा की सच्ची कहानी।
तुमने अपने कुकृत्य से किया ऐसी दुर्दशा की पक्की कहानी।।
जनसंख्या वृद्धि तृष्णा वृद्धि से होती है शहरीकरण की वृद्धि।
इससे ही होता प्रकृति शोषण प्रदूषणकारी आपत्ति वृद्धि।।... स्थायी...

जनसंख्या वृद्धि शहरीकरण ने अनेक आपदायें लाये हैं
शब्द प्रदूषण वायु प्रदूषण जल प्रदूषण भी बढ़ाये हैं
ग्लोबल वार्मिंग ओजोन परतक्षय अतिवृष्टि अनावृष्टि लाये हैं
दो प्रतिशत नगरों के कारण सत्तर प्रतिशत प्रदूषण बढ़े हैं... (1)

भोग-धनतृष्णा के कारण तुमने ही ये अनर्थ किये
भोग तृष्णा से जनसंख्या बढी भोगोपभोग सामग्री बढ़ाये
धनतृष्णा से प्रकृति शोषण कर उद्योग व्यापार तुमने बढ़ाये
इसी हेतु है कल कारखाना यान वाहनों की संख्या बढ़ाये... (2)

इसके कारण जल थल नभ में यातायात की संख्या बढ़ी
सड़क रेलमार्ग बस स्टेण्ड एयरपोर्ट की संख्या भी बढ़ी
इससे भी पुनः प्रकृति हनन प्रदूषणों की मात्रा भी बढ़ी
तृष्णा के कारण तुम्हारी उन्नति भस्मासुर की प्रवृत्ति बढ़ी... (3)

नगर में सदा भीड़ ही भीड़ समाज का कोई काम नहीं
निशिदिन ही जागते रहो सुख स्वास्थ्य शान्ति कुछ भी नहीं
धन के कारण पगले हुए मृगमरीचिका का करो है पीछा
तृष्णा कभी शान्त न होती तनाव अशान्ति करते पीछा... (4)

निवास हेतु स्थान भी नहीं भोजन पानी प्रदूषित सब हैं
वायु तो मानो विष के सम इससे होते रोग विषम हैं
शरीर मन आत्मा अस्वस्थ स्वार्थ की भीड़ न देती साथ
लाखों के मध्ये एकला विवश नारकी यथा नरक में वास... (5)

नरक में यथा नारकी है लड़े क्रोध ईर्ष्या से परस्पर हने
कोई किसी के दर्द न जाने निशिदिन मोहतम में पड़े
ऐसा ही कार्य नगर में होते शान्ति समन्वय समता छोड़े
ईंट कंकरीट फ्लेट के बिल में परस्पर न सहयोग करते... (6)

अभी तो जागो तृष्णा को त्यागो नगर रूपी नरक त्यागो
मानव जीवन अति अनमोल दुःखरूपी गरल नहीं घोलो
आत्मकल्याण के मार्ग तू खोल शान्ति अमृत जीवन में घोलो
सादा जीवन उच्च विचार से समस्त आपदा से मुक्ति पालो... (7)

महावीर के अहिंसा अपरिग्रह तृष्णा त्याग है बुद्धदेव के
महात्मा गाँधी के सादा जीवन पर्यावरण रक्षा विज्ञान के
धर्म अर्थ काम मोक्ष मार्ग के कबीरदास के फकीरपन के
'कनकनन्दी' के सुझाव मान के अनुयायी बनो विकास पथ के... (8)

भारतीयों की स्टेटस सिम्बल-अप टू डेट की विकृत मानसिकता (भारतीयों की अभिजात्य प्रवृत्ति एवं आधुनिकता)

(वॉरेन बफेट व बिल गेट्स से आधुनिकता सीखें भारतीय)

(राग- 1. सुनो सुनो ऐ दुनियाँ वालों... 2. है यही समय की पुकार...)

सुनो सुनो हे! दुनियाँ वालों, हम इण्डियन की थोथली वृत्ति/(प्रवृत्ति)
वर्षा पानी बिन यथा बादल, गर्जन तर्जन बाह्य प्रवृत्ति... सुनो सुनो... (टेक)...
यथा मयूर के पंख विशाल, देखने से लगे अति सुन्दर
दूर गगन में उड़ने योग्य न, कदापि यदि आ जावे संकट
बकरे के गले के थन समान, दूध न झरे करे सारसंभार
मृग मरीचिका सम दूर से रम्य, प्यास न बुझे भ्रमात्मक रम्य... सुनो...(1)
अभिजात्य वृत्ति या आधुनिकता, हम इण्डियन की खोखली वृत्ति
बर्थ डे सेरेमोनी से प्रारम्भ होती, डैथ डे सेरेमोनी तक होती वृत्ति
बच्चों की पढ़ाई अंग्रेजी स्कूल, अधिक फीस अधिक ट्यूशन
बस्तों के तले कराह रहा है, कोमल शरीर व अबोध मन... सुनो... (2)
नम्बर लाना प्रोग्राम देना, डाँस स्पर्धा में भाग भी लेना
डिग्री भी लेना जॉब करना, महानगरों या क्लब में जाना
शराब पीना मांस भी खाना, तम्बाखू सिगरेट नशा भी करना
बाजारू खाना कोका भी पीना, बफे सिस्टम में खड़े खड़े खाना... सुनो...(3)
खड़े खड़े ही पेशाब जाना, सूटबूट सह शौच भी जाना
उसी ड्रेस से काम करना, भोजन गृह या मन्दिर जाना
गॉगल्स टॉई सूट पहनना, गरमी में भी सूटेड होना
मद्य पीकर गाड़ी चलाना, यातायात के नियम तोड़ना... सुनो... (4)
चमचमाती गाड़ी भी होना, अनावश्यक गाड़ी चलाना
कोई मरे या अपंग होय, अपना शौक पूरा करना
नटनटी को शिर चढ़ाना, उनका गाना उनका खाना
नाम रखना स्टाइल करना, गुण भी गाना पूजा करना... सुनो... (5)
ऐसा ही नेता खेल खिलाड़ी के, अन्धे होकर नकल करना
पाश्चात्य देशों की अपसंस्कृति को, अकल बिना ही ओढ़े रहना
नेल पॉलिश लिपिस्टिक के बिन, फैशन का मजा न आना
अनावश्यक हिंगलिश बोलना, मातृभाषा भी सही न आना... सुनो... (6)
घड़ी पहनकर गप्पे मारना, समय पे कोई काम न होना

अश्लील गाना सिनेमा हेतु, मोबाइल टी.वी. कैसेट होना
गृह सज्जा हेतु शौकीन वस्तु, हिंसात्मक बहुमूल्य चलेगा
जिससे आधुनिकता फैशन झलकती, धर्म-अधर्म सभी चलेगा... सुनो...(7)
मन्दिर पर्व तीर्थयात्रा भी, इसी निमित्त प्रयुक्त होते
विवाह उत्सव मृत्यु संस्कार, स्टेटस सिम्बल कारण होते
इसी हेतु हे दुनियाँ वालों!, हम इण्डियन रहे इडियट (कंगाल, अनाड़ी, पिछड़े)
पेट तो खाली मूँछ में घी, इसलिए हम बने अनाड़ी... सुनो... (8)
इसलिये तो हमें जगाने, वॉरेन बफेट आये भारत
बिल गेट्स भी साथ में आये, इण्डियन को दानी बनाने
हाय रे इण्डिया! ये क्या हुआ, विश्वगुरु बना पाश्चात्य चेला
गुरु तो बना गँवार आज, शिष्य बन गये श्री गुरुराज... सुनो... (9)
इसीलिये तो 'कनकनन्दी' तुम्हें, ललकारे उठो हे आर्य!
हुत गौरव गत गौरव पुनः, प्राप्त कर बनो आत्मा के राज... सुनो... (10)

सेवक की आत्मकथा

(सेवाधर्म की महत्ता एवं उसका फल)

तर्ज :- (1. भक्ति बेकरार है... 2. भोली मेरी माँ... 3. जीना यहाँ.)

सेवक मेरा नाम है, सेवा करना काम है,
परोपकार की भावना से, वैयावृत्ति काम है।।... (टेक/स्थायी)
सेवा धर्म तो महान् है, तीर्थंकर जिसका फल है,...2
तप में महान् अन्तरंग तप, बाह्य से अति महान् है।
आहार औषधि वसतिका दान उपकरण ज्ञान दान है...2
शरीर मर्दन, उपसर्ग शमन पीड़ा निवारण काम है।। सेवक...

विनय करण, आसनदान, ऊष्ण-शीत दूरी करण...2
कमण्डल ले साथ गमन, वसतिका भी परिमार्जन।।...
मलमूत्रादि स्वच्छ करण, गुरु आज्ञा का परिपालन...2

नमस्कार पूजन, गुण स्मरण, गुणानुवाद है मेरा काम।। सेवक...

सेवा धर्म में गर्भित होता, वैयावृत्ति जैसा महान् कर्म,...2
सरलता, नम्रता, परोपकार, दान, पूजा, त्याग महान् धर्म...2
उपगूहन, स्थितिकरण, वात्सल्य प्रभावना अंग भी जान...2
तीर्थंकर प्रकृति बन्ध निमित्त अनेक भावना गर्भित जान।। सेवक...

इसलिए मैं सेवक बनकर स्वयं को मानूँ धन्य महान्...2
मेरे काम को अज्ञानी-अधर्मी, माने दीन गरीब का काम...2
सेवा से ही मेवा मिलता, जो देता सो पाता निदान,
नम्रता से प्रभुता मिलती, प्रभुता से प्रभु दूर ही मान।। सेवक...

दयाभाव से सेवा (दान) करना, दयादत्ति है गुणमहान्...2
गरीब, रोगी, मात-पिता, दुःखी विकलांग दुर्बल जान।...2
यथा योग्य आहार, औषधि ज्ञान उपकार पुण्य महान्...2
वृक्ष, गाय, नदी, उपकार करे, हम क्या उनसे नीच निदान।। सेवक...

नाग-नागणी को मंत्र सुनाकर आदर्श बनाये पार्श्व महान्...2
जीवन्धर ने मंत्र सुनाया, जिससे श्वान बना देव महान्।...2
तीर्थंकर भी दिव्यध्वनि से, पशु-पक्षी को भी देते ज्ञान...2
इससे सिद्ध है मैं भी सेवक बन, नहीं करता हूँ क्षुद्र काम।। सेवक...

कलिकाल में कई महाजन (महापुरुष) सेवक बनकर बने महान्...2
नाइटेंगल, मदरटेरेसा, सुभाष, गान्धी विनोबा भावे जान।...2
बाबा आमटे, मेनका गान्धी, बिलगेट्स व बफेट वॉरेन,...2
रेडक्रॉस, नारायणसेवा, लायन क्लब आदि संस्था भी जान।। सेवक...

मैं सेवक, करूँ मैं सेवा, मुझे मिलती है तृप्ति महान्।...2
उदार, प्रेम, अहिंसा-त्याग, मेरे काम से जागृत जान।।...2
सेवक बने शोषक नहीं, याचक नहीं दाता महान्...2
''कनकनन्दी'' की कविता द्वारा, मेरा निवेदन विश्व को जान।। सेवक...

प्रकरण - 5

राष्ट्र के रक्षक एवं भक्षक के स्वरूप

(-रक्षक रूप में भक्षक मत बनो-)

P.T.S. खेरवाड़ा में 800 देश रक्षक सैनिकों के समक्ष आचार्य रत्न श्रीकनकनंदीजी गुरुदेव ने अपने उद्बोधन में कहा कि हे! देश के रक्षक हमारे नौजवानों! मैं आज अत्यन्त हर्ष एवं गौरव अनुभव करता हूँ क्योंकि मैं आज सामान्य मानव के समक्ष कुछ कहने नहीं जा रहा हूँ परन्तु मैं आज महान् राष्ट्र भारत के जो रक्षक हैं, जिनके सबल कंधों पर राष्ट्र का उज्ज्वल भविष्य स्थिर रहे ऐसे महान् जवानों के सामने कुछ बोलने जा रहा हूँ। आप लोग इस देश के रक्षक हो तो हम भी इस देश के महा रक्षक हैं, तुम इस देश के सैनिक हो तो हम विश्व के सैनिक हैं। तुम इस राष्ट्र के अन्याय की , समाज के शल्य चिकित्सा करने वाले डॉक्टर हो तो हम भी इस अध्यात्म के क्षेत्र में जो अन्याय पाप है उसकी शल्य चिकित्सा करने वाले डॉक्टर हैं। वीर जवानो! विश्वयुद्ध के बाद जब विजयी सेनापति हमारे भारत में आता है। उस समय चाचा नेहरू को विश्वयुद्ध विजयी सेनापति पूछता है कि चाचा नेहरू ! आपके देश की विशेषता क्या है? नेहरूजी कहते हैं सेनापतिजी आपके देश में भोग की पूजा है, हमारे देश में त्याग की पूजा है, आपके वहाँ धन की पूजा है, हमारे देश में धर्म की पूजा है, आपके देश में उद्योगपति की पूजा है तो हमारे यहाँ भिखारियों (साधु) की पूजा है। आप मानें या ना मानें यही हमारे देश की विशेषता है, यही गौरव है। प्रिय बंधुओं! अनादि काल से भारत विश्व का गुरु रहा है-केवल अध्यात्म के क्षेत्र में ही नहीं हर क्षेत्र में देश विश्व का शिरोमणी रहा है। जब तक हमारे देश में अहिंसा के साथ शौर्य, साहस, बल, बलिदान की भावना रही विश्व की कोई भी शक्ति यहाँ प्रवेश नहीं कर पायी। जब सिकंदर देश की दिग्विजय के लिए विद्युत् वेग से भारत में आया और उसके दाँत यहाँ खट्टे हो गये। उसके दाँत खट्टे करने वाला कौन था? जानते हो ? वह कोई हिंसक, कोई पापी नहीं

था, जो कि आगे जाकर दिगम्बर जैन साधु बना वह है चन्द्रगुप्त मौर्य। उसने यह सिद्ध किया कि भारतवासी अहिंसक हैं परन्तु कायर नहीं है। जहाँ कायरता है वहाँ अहिंसा नहीं हो सकती हैं। दोनों पर्यायवाची शब्द हैं इसलिये वीरो आप लोग भी सैनिक हो तो हम भी साधु-सन्त हैं, आप लोग भी सेवक हैं और हम भी सेवक हैं। जिस प्रकार डॉक्टर रोगियों की शल्य चिकित्सा करता है उसी प्रकार हम भी मानसिक रोगियों की शल्य चिकित्सा करते हैं। समाज, राष्ट्र में जो अन्याय है, अत्याचार है आप लोग भी उसको दूर करने के लिए शल्य चिकित्सा करते हो इसलिए साधु, डॉक्टर, सैनिक तीनों समान हैं।

गीता में कहा है-

''योगः कर्मसु कौशलः'' योग क्या है?

स्व-स्व कर्त्तव्यों में कर्त्तव्यनिष्ठ, निःस्वार्थ भाव से दूसरों के लिए कर्म करना यही योग है। इसलिए एक कवि ने फूल की मनोकामना इस प्रकार कहा हैः-

चाह नहीं मैं सुरबाला के गहनों में गूँथा जाऊँ,
चाह नहीं मैं देवों के सिर पर भी इठलाऊँ,
मुझे तोड़ लेना वनमाली उस पथ पर तुम देना फेंक,
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने जिस पथ पर जायें वीर अनेक।

अर्थात् हे माली! मैं देवों की जो माला है उसमें गूँथना नहीं चाहता हूँ और देवों के सिर पर या भगवान् के चरणों में भी चढ़ना नहीं चाहता हूँ माली! मेरा शरीर कोमल है तथापि मुझे तोड़ लेना और उस पथ पर देना फेंक जिस पथ पर राष्ट्र की, धर्म की, प्रकृति की, सम्मान की, संस्कृति की रक्षा करने के लिए वीर सैनिक जा रहे हैं।

आचार्य श्री ने हमारे देश की स्थिति का वर्णन करते हुए कहा कि- हमारे देश के लोग अहिंसा के नाम पर भोंदू हो गये। विदेश से लोग आकर हमको रौंद डालें। और हम लोग कायरों के जैसे उनके तलवे चाटें। यह अहिंसा नहीं है। हमारा देश परतंत्र हुआ कायरों के कारण, अधर्मियों के कारण हुआ। कोई भी व्यक्ति जो धार्मिक होता है, कायर नहीं होता है, वीरों से वीर, शूरों से शूर होता

है। यह महावीर भगवान् का लांछन ही क्या है। जैन धर्म में एक महावीर भगवान् हो गये जो कि स्वयं क्षत्रिय राजकुमार थे। जैन धर्म में जितने तीर्थंकर थे वे सभी क्षत्रिय थे। महावीर भगवान् का लाक्षणिक चिन्ह क्या है? सिंह। सिंह किसका प्रतीक है? सिंह वीरत्व का, साहस का प्रतीक है। इसलिए आप लोग वस्तुतः अहिंसा के रक्षक हो इसलिए आप लोग देश के रक्षक हो। उस देश की रक्षा तब तक नहीं होगी जब तक कि उस देश के लोग जागरूक, साहसिक व स्वाभिमानी नहीं होंगे।

आचार्यश्री ने एक उदाहरण देते हुए कहा कि- एक बार जब स्वामी रामतीर्थ जो पंजाब विश्वविद्यालय में गणित के प्रोफेसर थे। वह विदेश जाते हैं। एक स्कूल में उनका भाषण होता है। वे एक प्रश्न पूछते हैं कि 'बच्चों आप बुद्ध को प्यार करते हो? हाँ हमारे तो भगवान् है, क्योंकि जापान में बौद्ध धर्म है। वह पूछते हैं अरे बच्चों! आप कन्फ्युशियस को प्यार करते हो? हाँ हमारे धर्म पुरोहित है। फिर वह कहते हैं प्यारे बच्चों! यदि एक सेना आक्रमण करने आ रही है और उसका नियंत्रण भगवान् बुद्ध और कन्फ्युशियस करें तो आप क्या करोगे? बच्चे कहते हैं उस समय हम उस महात्मा बुद्ध और पापी कन्फ्युशियस को काट डालेंगे, माँस चील-पक्षियों को खिला देंगे। तब रामतीर्थ गद्गद् हो जाते हैं और कहते हैं धन्य! धन्य! तुम जापानी लोग। विश्व युद्ध में नागासाकी और हिरोशिमा पर बम डालकर उनका विध्वंस किया गया था। और जो देश हमारे एक प्रदेश से भी छोटा है आज विश्व का सबसे बड़ा शक्तिशाली देश है। आज अमेरिका भी उसके सामने हाथ फैलाये खड़ा है क्यों?

क्योंकि जापान में राष्ट्रीयता है और आपके देश में जो सबसे उच्च पद पर हैं वही राष्ट्र घातक है। आज जापान एक शक्तिशाली देश बनकर उभरा है और भारत जो अनादिकाल से विश्व का गुरु बना हुआ है आज भिक्षा पात्र लेकर भीख माँग रहा है। अधिक से अधिक भीख माँगने पर और अधिक से अधिक भीख मिलने पर बड़े-बड़े अक्षरों में पेपर में आता है कि ''उस देश ने हमको इतना ऋण दिया और उस देश ने इतना दिया। चुल्लू भर पानी में

डूबकर मर जाना चाहिए। आप लोगों की धमनी में वीरों का खूंन नहीं है इसलिए आप लोग भीख माँग रहे हैं। इसलिए मैं विशेषकर के भारत को पहले महान् मानता था, परंतु भारत में भी राजस्थान। यह राजस्थान वीरों की भूमि है। स्वाधीनता की रक्षा के लिए जिस समय बड़े-बड़े राजा अकबर की गुलामी करते थे तब राणा प्रताप सूखी रोटी खाकर स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ रहे थे। आचार्यश्री ने कहा कि ऐसे महान् प्रदेश में तुम लोगों का जन्म हुआ है इसलिये आप लोगों का यह उत्तरदायित्व बन जाता है कि आप लोगों को क्या करना चाहिए? सोचना चाहिए? आप लोग कौन हो?''

आचार्यश्री ने कहा कि मैं जब विहार करता हूँ तो कुछ पुलिस थानों में बड़े बड़े आक्षरों में यही श्लोक लिखा देखा हूँ-

''परित्राणाय हि साधुनाम् विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।।''

तदुपरान्त आचार्यश्री ने प्रश्न किया कि यह जो पुलिस है यह पुलिस कौन है? आरक्षक, संरक्षक है। आप लोगों का क्या कर्त्तव्य हो जाता है? आप लोग ये खाकी वस्त्र पहनते हो क्यों पहनते हो, जानते हो? इसका क्या प्रतीक है? उन्होंने अवगत कराया कि जिस प्रकार राष्ट्रीय झंडा में तीन रंग हैं। हरा, सफेद व केसरिया और बीच में अशोक चक्र। अशोक चक्र किसका प्रतीक है? प्रगति का प्रतीक है, हरा हरियाली का, समृद्धि का, सफेद पवित्रता का, अहिंसा का, सत्य का, केसरिया बलिदान का त्याग का। तो ये जो आप लोग खाकी वर्दी पहनते हो क्यों पहनते हो जानते हो? हम जो ये पिच्छी लिये हैं वह क्यों लिये हैं जानते हो? आप लोगों को पीटने के लिए? बच्चों को पीटने के लिए? नहीं यह अहिंसा का प्रतीक है। हम छोटे से छोटे जीवों की रक्षा करते हैं। इसी प्रकार आप जो खाकी ड्रेस पहनते हो कभी विचार किया है यह क्या है? यह भगवा का प्रतीक है, यह धरती का रंग है, त्याग, तपस्या का प्रतीक है। धरती जिस प्रकार सब कुछ सहन करती है। किसान धरती को खोदते हैं, जमीन को काटते हैं, फिर भी वह सब कुछ सहन करती है, इसलिए इसे धरती माता कहते

हैं। आपने यह जो भगवा वस्त्र पहना है। इसका प्रतीक त्याग, तपस्या, बलिदान और सेवा है। विश्व की धरती सब कुछ सहन करती है और दूसरों को सब कुछ देती है। इसी प्रकार आप लोगों को इस राष्ट्र की धरती के समान सब कुछ सहन करना चाहिए, बलिदान देना चाहिए। साधु के भगवा वस्त्र और आप लोगों के खाकी ड्रेस में कोई अन्तर नहीं है। एक भगवा वस्त्र सहित, खाकी ड्रेस सहित, आप लोग भी साधु हो, संन्यासी हो, क्योंकि आप लोग देश के लिए सेवा करते हो। आप लोगों का क्या कर्त्तव्य है? आचायश्री ने कहा कि

परित्राणाय ही साधुनाम्...

ज्यादा करके ऐसे श्लोक एम.पी., महाराष्ट्र में लिखे जाते है और वहाँ पुलिस चौकी ऐसा नहीं लिखा जाता है। वहाँ लिखा जाता है ''आरक्षक चौकी'' आप समाज के आरक्षक हो जो देश की, जो गरीबों की, दीन-हीनों की दुर्बलों की बच्चों की रक्षा करते हैं, वे हैं आरक्षक। देश की रक्षा करना, दुर्बलों की रक्षा करना आप का उद्देश्य है।

एक दिन एक साधु उपदेश कर रहे थे। उपदेश के माध्यम से बताते हैं कि- यदि किसी कारणवश किसी ने कोई पाप किया हो तो प्रायश्चित कर लेना चाहिए। तभी एक सज्जन खड़े होकर बोलते हैं कि- मैंने चोरी की थी। गुरुदेव पूछते हैं तुमने क्यों चोरी की? तो वह कहता है कि मेरी कुछ लड़कियाँ हैं। उनकी शादी नहीं हो पा रही थी। समाज से प्रताड़ना मिल रही थी। हमारे घर में कुछ नहीं था। एक बड़ा सेठ था, एक बहुमूल्य हार लेकर सामायिक कर रहा था। मैं हार चोरी करके ले आया और उसे बेच दिया और लड़की की शादी करवायी। वह कहता है मुझे माफ करना गुरुदेव। तभी उसकी पत्नी कहती है यह दोषी नहीं है मैं दोषी हूँ, क्योंकि मेरे स्वामी जो उपार्जन करते हैं, मैं उसको फिजूल खर्चे में बरबाद कर देती हूँ। फिर उसके बाद एक बहुत बड़ा सेठ खड़ा होता है। वह कहता है- गुरुदेव मैं दोषी हूँ क्यों दोषी हूँ? क्योंकि हार मेरा था और मुझे मालूम था कि यह हमारे समाज का एक व्यक्ति है और जहाँ परस्पर उपकार करते हुए, सहायता करते हुए वास करते हैं, उसे समाज कहते हैं। और

मुझे मालूम था कि यह गरीब है इसकी लड़कियाँ भी हैं। मैंने जो दान किया, मंदिर बनवाया वह ढोंग किया, परन्तु किसी गरीब की सहायता नहीं की इसलिए इसने चोरी की इसी कारण मैं दोषी हूँ। उपदेश कर रहे वे साधु कहते हैं कि मैं दोषी हूँ। क्यों? साधु किसे कहते हैं? जो गृहस्थ के घर जाकर अच्छा खाना खा लेते हैं, जो टाँग पसार कर सोते हैं, भगवा वस्त्र पहनते हैं या नंगा हो जाते हैं वह साधु है? नहीं। साधु वह है जो समाज का सुधार करें। शंकराचार्य ने कहा है-

''मुंडित मुंड लुञ्चित केशः कशायाम्बर बहुकृतवेषम्।
पश्यन्यपि च पश्यति गेहे उदर पोषणे बहुकृतवेषम्।।''

साधु जो साधना करते हैं, समाज को आगे बढ़ाते हैं, समाज को ज्ञानमय करते हैं, समाज को आगे बढ़ाने के लिए प्रेरित करते हैं इसलिए मैं दोषी हूँ। समाज में जो विषमता है, जो कमी है, अन्याय है, शोषण है उसे दूर करने के लिए मैंने उपदेश नहीं दिया इसलिए मैं दोषी हूँ। सब अपना-अपना दोष स्वीकार करते हैं और प्रायश्चित करते हैं। इसलिए आचार्यश्री वहाँ उपस्थित वीर जवानों को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि देश के वीर जवानो! केवल व्यक्ति पूर्ण रूप से दोषी हो या नहीं हो तथापि उस पर डण्डा उठाकर बरसना नहीं चाहिए। तुम्हारे पास शस्त्र है हमारे पास शास्त्र है। हम शास्त्र का प्रयोग करते हैं मानसिक रोग को दूर करने के लिए, सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिए। शस्त्र है जो धर्म के माध्यम से नहीं चलते हैं उन लोगों को रोकने के लिए। माना किसी व्यक्ति ने चोरी कर ली वह व्यक्ति ही दोषी है और अपना गुनाह कबूल कर लिया तो आप लोगों को उनको दण्ड नहीं देना चाहिए। आचार्यश्री ने कहा कि ''मेरा जयपुर सेन्ट्रल जेल में उपदेश हुआ तो मैंने कहा हे बन्धुओं! आप लोग सोचना नहीं आप दोषी हो। शायद आप लोग निर्दोष हों, परन्तु जो केन्द्र में बैठे हुए हैं, राज्य में बैठे हुए हैं, **बड़ी-बड़ी सत्ता** में बैठे हुए हैं वे तुमसे भी बड़े दोषी हो परन्तु सत्ता के बल पर, बुद्धि के बल पर, अर्थ के बल पर सत्ता में बैठे हुए हैं। परन्तु यह जरूरी नहीं है कि आप लोग दोषी हो जैसे नारायण कृष्ण

कहाँ जन्म लिये थे? बन्दी गृह में जन्म लिये थे। जब स्वतंत्रता संग्राम हुआ था तब महात्मा गाँधी, जवाहर लाल नेहरू, पटेल, लाल-पाल, सुभाष बोस क्या ये सब दोषी थे, कोई डाकू थे तो भी उनको बन्दीगृह में डाल दिया गया था।

जिस सत्ता में महान् ज्ञानी राधाकृष्णन्, संत सात्त्विक राजेन्द्र प्रसाद बैठे थे आज उस सत्ता में बैठकर लोग क्या कर रहे हैं? अतः इस समय में आपका व हमारा क्या कर्त्तव्य बन जाता है? यह हमें आत्म विश्लेषण करना है हमारे देश को एक ऐसे सूर्य के प्रकाश में ले जाना है, जहाँ प्रकाश ही प्रकाश हो अंधकार न हो। यह आप लोगों को विचार करना है। अभी विदेश में बहुत बड़ा चक्र बनाया गया है। 21वीं शताब्दी का स्वागत करने के लिए परन्तु आप लोग हमारे देश को उस परतंत्र-प्राचीन युग में ले जाने के लिए कटिबद्ध हो। इसलिए हमें आत्म विश्लेषण करना है। पहले व्यक्ति निर्माण करना चाहिए, व्यक्ति निर्माण से समाज निर्माण होता है और समाज से राष्ट्र निर्माण होता है इसलिए कृषक, सैनिक और संन्यासी देश का उद्धार कर्ता है। कृषक हमें भोजन देता है और सैनिक आप लोग देश की रक्षा करते हो और संत नैतिक व आध्यात्मिक प्रकाश देते हैं इसलिए कृषक, हम लोग-संन्यासी और आप लोग भी कोई छोटे संन्यासी नहीं हो आप लोग कर्मयोगी हो, और हम ज्ञान योगी हैं जहाँ आप अपना कर्त्तव्य करते हो, तो वही आपकी पूजा है "Work is Worship" यदि पवित्र भावना से कर्त्तव्य करते हो तो वही आपकी पूजा है। इसलिए ये आपका जो डण्डा है, धर्म का झण्डा है, क्योंकि झण्डा ऊँचा रहे हमारा। कब आपका डण्डा न्याय का झण्डा बनेगा? यम के पास एक डण्डा रहता है और आप लोग भी वर्तमान के यम हो, क्या यम का डण्डा एक निर्दोष व्यक्ति को दण्ड देता है? इसलिए आपका डण्डा धर्म का झण्डा है। इसलिए आपका डण्डा सुरक्षा के लिए है दूसरों को दण्ड देने के लिए नहीं है।

आशीर्वाद देते हुए आचार्यश्री ने कहा कि ''आप लोग ज्ञानी बनो, ध्यानी, बलवान बनो।'' क्योंकि जब देश के नौजवान सुखी रहते हैं तो राष्ट्र उन्नति करता है। जैसे 'जय जवान! जय किसान।' जब तक संन्यासी नहीं बनोगे तब

तक रक्षक बन कर भक्षक बन जाओगे।

आचार्यश्री ने उन सभी नौजवानों को शुद्ध शाकाहारी बनने के लिए कहा और बताया कि - भगवान् महावीर, अर्जुन, हनुमान ये सब शाकाहारी थे। महात्मागाँधी को कुछ लोग बोले कि आप माँस खाओ क्योंकि माँस खाने से शक्ति बढ़ती है किन्तु माँस खाने से राक्षस प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है।

Animal food for those,
Who will fight and die,
and vegetable food for those,
Who will live and think.

मांस खाने से हिंसक भावना जन्म लेती है अतः आप लोगों को अभक्ष भक्षण नहीं करना चाहिए। गीता में कहा है- जो तामसिक भोजन करते हैं वे तामसिक प्रवृत्ति के हो जाते हैं जो सात्त्विक भोजन करते हैं वे सात्विक प्रवृत्ति के हो जाते हैं क्योंकि As you eat so you think as you think so you become "जैसा खावें अन्न वैसा होवे मन, जैसे पिये पानी वैसी बोले वाणी" इसलिए आपका भोजन भी शुद्ध सात्त्विक, शाकाहारी होना चाहिए। मैं राजस्थान में 5-6 वर्ष से घूम रहा हूँ। राजस्थान के लोगों में बहुत दया और करुणा है। जैसे यू.पी., हरियाणा, गुजरात में घूमा तथापि वहाँ इतने पक्षी नहीं जितने राजस्थान में हैं। क्योंकि राजस्थान में जैन हों, अजैन हों पक्षी को भी खिलाते हैं, उधर के लोग तो पक्षियों को मार देते हैं। राजस्थान के लोग पक्षियों को खिलाते हैं और उधर के लोग पक्षियों को ही खा लेते हैं। मैं जहाँ भी जाता हूँ स्कूल, कॉलेज में प्रवचन देता हूँ, शिविर लेता हूँ, सबको पढ़ाता हूँ, जैन-अजैन सबको पढ़ाता हूँ। मैं शान्ति चाहता हूँ। वह शान्ति सत्य और अहिंसा की शांति है। आप लोगों को नीतिवान, सदाचारी होना चाहिए। यदि आपकी भावना भक्ति है तो आप लोग मांस नहीं खाना, शराब नहीं पीना, क्योंकि जो शराब पीते हैं माँ बहिन को भी गाली देते हैं। विवेक भ्रष्ट हो जाता है, क्रूरता आ जाती है इसलिए आप लोगों को ये करना है और क्योंकि जो बड़े-बड़े महापुरुष लोग होते थे वे सब धार्मिक होते थे। जैसे शिवाजी महान् बने किसके कारण?

समर्थ रामदास के कारण। वह समर्थ रामदास के पास जाकर पढ़ते थे। और आप लोगों को अपराध-मनोविज्ञान का अध्ययन करना चाहिए, समाजशास्त्र का और आप लोगों को धर्म के शास्त्र का भी अध्ययन करना चाहिए। आप लोग परेड़ करते हो, फायरिंग करते हो, कोई व्यक्ति पर फायरिंग करते हो पशु-पक्षी पर करते हो? नहीं। तो निर्दोष को नहीं मारना चाहिए। इसी प्रकार आप लोगों को विचार करना चाहिए कि कभी-कभी निर्दोष व्यक्ति को कष्ट दिया जाता है। एक बहुत बड़े लेखक हो गये महात्मा गाँधी के समकालीन 'मसरू बाल' आप लोगों ने नाम सुना होगा। उन्होंने एक बड़ी किताब लिखी थी "चट्टान से गिरता हुआ झरना" मैंने उसको पढ़ा था। उन्होंने यह सिद्ध किया था कि कुछ निर्दोष व्यक्तियों को जेल में यातनाएँ दी गई। इस पर आपको यह विचार करना चाहिए। समाज में कुछ व्यक्ति किसी प्रकार अन्याय करता है। कुछ विपरीत कार्य करता है तो अवश्य उस अन्याय को रोकना चाहिए परन्तु बिना विचार किये डण्डा नहीं बरसाना चाहिए क्योंकि यह कानून का नियम हैं। जिन्होंने कानून पढ़ा है उनको मालूम होगा हिन्दू धर्म, मुस्लिम धर्म मैंने पढ़ा परन्तु किसी भी धर्म में निर्दोष को व्यक्ति को दण्ड देना नहीं है क्यों? क्योंकि निर्दोष व्यक्ति को दण्ड देना धर्म को दण्ड देना है, धर्म की हत्या करना है। इसलिए वीरों! ये जों वीरों की तलवार है कायरों पर नहीं चलनी चाहिए। इसीलिए जब कोई आपके सामने होता है तो आपका कर्त्तव्य क्या होता है? अवश्य अन्याय का विरोध करना चाहिए। कभी अन्याय नहीं सहन करना चाहिए। जो अन्याय करते हैं और अन्याय सहते हैं दोनों दोषी हैं, दोनों पापी है। अभी मैं एक उदाहरण के तौर पर बताता हूँ कि **"एक दिन मैं आपके इस मिलेट्री केम्प से जा रहा था। तो हमारे एक सज्जन सैनिक मुझसे बोले (जो मुझे नहीं जानता है) आप नंगे इधर नहीं जा सकते हैं। मैं डर के मारे वहाँ से नहीं भागा। मैंने उसका जवाब अवश्य दिया क्योंकि साधु संत अहिंसक होते हैं कोई कायर नहीं होते हैं। महात्मा गाँधी बार-बार कहते थे कि मेरे समक्ष हिंसा ह और**

कायरता है। दोनों में से मैं किसको चूनूँगा ? कायरता को चुनूँगा? महात्मा गाँधी कहते है कि मैं हिंसा को चुनूँगा। क्योंकि कायरता स्वयं में एक बड़ी हिंसा है क्योंकि जब तक हमारे भारत के लोग कायर रहे हमारा देश परतंत्र रहा। महात्मा गाँधी अहिंसक थे कायर नहीं थे। जिसके राज्य में कभी सूर्य अस्त नहीं हुआ वह भी बिना अस्त्र के उनके साथ लड़े और अंग्रेजी शासकों को खदेड़ दिया। ''सत्यमेव जयते'' सत्य में महान् शक्ति है। इसलिए कभी अन्याय नहीं करना। अन्याय सहन भी नहीं करना। आप रामायण, महाभारत पढ़े होंगे। एक दिन कर्ण द्रोणाचार्य को पूछता है कि गुरुदेव यह बताइये! मैं जब युद्ध करने के लिए जाता हूँ तो अकेले कई शत्रुओं, कई राजाओं को परास्त कर लेता हूँ और जब भी मैं इन निहत्थे पाँच पांडवों के विरुद्ध युद्ध करता हूँ तो मैं हारता ही हारता हूँ ऐसा क्यों? द्रोणाचार्य कहते हैं कि हे वीर! जब तुम अन्यान्यों के साथ युद्ध करते हो तो तुम्हारे पक्ष में सत्य, न्याय होता है और उनके पक्ष में असत्य और अन्याय होता है और जब तुम पाण्डवों के विरूद्ध युद्ध करते हो तो पांडवों के पक्ष में सत्य, अहिंसा, न्याय होता है, और तुम्हारे पक्ष में असत्य होता है। इसलिए तुम हार जाते हो। इसलिए राधाकृष्णन् बोलते थे। What is religion? Religion is truth Non-violence & Justice. धर्म क्या है? हिन्दू धर्म, जैन धर्म ये केवल नाम हैं वस्तुतः धर्म क्या है? सत्य अहिंसा और न्याय होना चाहिए। महाभारत युद्ध में जब अर्जुन देखते हैं कि मेरे विरुद्ध में मेरे ही पितामह, मेरे ही भाई बन्धु खड़े हुए हैं तो उनका साहस, बल सब समाप्त हो जाते हैं। जिस गांडीव को लेकर वे युद्ध करते थे वह गांडीव नीचे गिर गया। उस गांडीव को भी उठा नहीं पाए। अर्जुन को कृष्ण कहते हैं कि हे अर्जुन! **क्लैवत्व मा गतपार्थः।** हे अर्जुन! नपुंसक मत बनो, कायर मत बनो, उठाओ बाण मारो इनको। अर्जुन ने कहा मैं इन्हें मार नहीं सकता हूँ। क्यों नहीं मार सकते हो? क्योंकि इमें मेरे गुरुजन, भाईबन्धु हैं। कृष्ण ने कहा- मैं तुम्हारे भाई बन्धुओं को मारने के लिए नहीं कह रहा हूँ। उनके अन्दर जो अन्याय, अत्याचार है उसे मारने के लिए कह रहा हूँ। इसलिए उनके अन्दर के अन्याय, अत्याचार

व पाप को मारो। नारायण कृष्ण ने गीता का उपदेश कहाँ दिया था? युद्ध क्षेत्र में सैनिकों को दिया था व अर्जुन को दिया था।

इसी प्रकार आप इस महाभारत युद्ध के सैनिक हो आप सब लोग अर्जुन हो और मैं नारायण कृष्ण हूँ, मैं भी आप लोगों को यह उपदेश देता हूँ। (सैनिकों द्वारा जोरदार तालियाँ) हे वीर! जवानों! उस महाभारत के महाभारत युद्ध में सत्य और न्याय का पक्ष लेकर के अन्याय को परास्त करने के लिए आप लोगों को वज्र के समान कठोर बनना चाहिए। कहा भी है-

वज्रादपि कठोराणि, मृदुनि कुसुमान्यपि।
लोकोत्तराणि चेतांसि, कोहि विज्ञातुमर्हति।।

जो महापुरुष होते हैं, वे वीर होते हैं आप लोगों को मालूम होगा भारत के जितने भी महापुरुष थे सब वीर थे। ''वीर भोग्य वसुन्धरा।'' यह वसुन्धरा किसकी दासी बनती है? वीर भोग्या वसुन्धरा (वीरों की)। इसलिए जिस प्रकार राम और कृष्ण की पूजा होती है उसी प्रकार महाराष्ट्र में शिवाजी की पूजा होती है। विश्वामित्र ब्रह्मर्षि थे, उनके एक हाथ में शास्त्र था तो एक हाथ में शस्त्र था। भारतीय लोग ''शास्त्रे बोद्धारणे योद्धा'' अर्थात् शास्त्र में पारंगत और रण में भी पारंगत होते थे। जब भारत की शान-बान को ललकारा गया तो सिक्ख गुरु ने इसका प्रतिकार किया। इसलिए आप लोगों को यह जानना चाहिए कि आप लोगों का क्या कर्त्तव्य है?

महावीर के समकाल की कहानी है, वैशाली गण-राज्यों का मुख्य केन्द्र था। गण-राज्यों के अधिनायक महाराज चेटक की यह राजधानी थी। चेटक के पास गण-राज्यों की रक्षा के लिए विशाल सेना थी। जानते हैं, इस सेना का कमाण्डर कौन था? वरुण नाग। वरुण नाग की गणना श्रमण भगवान् महावीर के मुख्य उपासकों में होती थी। वह जीवन के प्रभात से ही धर्मप्रिय था। प्रतिदिन स्वाध्याय एवं तप करना उसके जीवन का प्रमुख कार्य था। धर्म के प्रति उसकी अभिरुचि यहाँ तक बढ़ी थी कि किशोरावस्था में ही उसने बारह व्रत ले लिये थे। संकटकाल में किस भाँति धर्म एवं कर्त्तव्य का परिपालन किया जाता है, यही

शिक्षा हमें वरुण नाग के जीवन से मिलती है। बिहार प्रान्त के मुजफ्फरनगर जिले में एक बसाढ़ ग्राम है। यह ग्राम आज से ढाई हजार वर्ष पूर्व वैशालीनगर के रूप में था। आज जो वैभव कलकत्ता एवं बम्बई को प्राप्त है, उससे कहीं अधिक वैभव इस बसाढ़ गाँव को प्राप्त था। जरा इतिहास के पन्नों पर आँखे गड़ा कर देखिये। यह वैभव लंदन, पेरिस और बर्लिन से कम नहीं था।

मगध सम्राट श्रेणिक के सबसे बड़े पुत्र कुणिक अपनी विशाल सेना लेकर वैशाली को विध्वंस कर देगा, महाराजा चेटक इसी चिन्ता में निमग्न थे। कुछ सूझता नहीं था। एक ओर शरणागत की रक्षा का महान् भारत तो दूसरी ओर भयंकर विनाश। बड़ी जटिल समस्या थी। बहत्व कुमार को देने की वे कल्पना भी नहीं कर सकते थे। दूसरी ओर गुलामी का जीवन भी उन्हें पसन्द न था, इसलिए उन्होंने युद्ध का ही निश्चय किया।

भारतीय संस्कृति की एक विशेषता रही है वह है शरणागत की रक्षा। युद्ध में वीरगति से मरना अच्छा, परन्तु शरणार्थी को शत्रु के हाथों सोंपना स्वीकार नहीं। जरा प्राचीन भारत का इतिहास उठाकर देखिये। आप देखेंगे की शरणागत की रक्षा के लिए क्या कुछ बलिदान देना होता है। शरणागत की रक्षा के लिए सर्वस्व की आहुति देने वाले भारतीय वीरों ने क्या नहीं किया है? इस प्रकार का उत्तर मौर्य कालीन भारत से पूछिये? अधिक नहीं तो राजस्थान का इतिहास तो ऐसे उदाहरणों से ओत-प्रोत है ही।

बहत्वकुमार कुणिक का छोटा भाई था। दोनों सहोदर थे। दोनों एक ही माता की गोद में खेले-कूदे थे। बाल्यकाल में दोनों में बड़ा प्रेम था। परन्तु आज वह प्रेम न जाने कहाँ लुप्त हो गया था। आज कुणिक के मानस में उसके प्रति द्वेषाग्नि धधक रही थी। इसलिए आज वह उसे मारना चाहता था। बहत्वकुमार अपनी रक्षा के लिए नाना चेटक के पास आ पहुँचा था।

वैशाली नरेश चेटक के सम्मुख दो ही प्रश्न है। बहत्वकुमार की रक्षा या अपने कर्त्तव्य के प्रति च्युत होना। पर राजपूत अपने कर्त्तव्य के प्रति च्युत होना नहीं जानता। वह शरणागत की रक्षा के लिए मृत्यु को भी चुनौती दे देगा।

किन्तु अपने कर्त्तव्य पालन के लिए मृत्यु से भी लड़ेगा। आखिर महाराज चेटक ने भी इस घोषणा का स्वागत किया। सेना को तैयार रखने के लिए कमाण्डर को सूचना दी गई। वैशाली की विशाल सेना और जनता अपनी स्वाधीनता की रक्षा के लिए और शरणागत की रक्षा के लिए तैयार है। वह अन्याय का प्रतिकार करने से मुख नहीं मोड़ेगी, रणभेरी बजी। वीर योद्धा सुसज्जित होकर राजमहल के सामने एकत्रित हो गये। घोड़े की हिनहिनाहट और हाथियों की चिंघाड़ से वैशाली गूँज उठी। समग्र सेना तैयार हो गयी। कूच के लिए कमाण्डर के आदेश की प्रतीक्षा करने लगी। एक तरुण सैनिक भीड़ को चीरता, घोड़े पर चढ़ा, बगल में तलवार एवं भाला लटकाये सुसज्जित होकर सेना का निरीक्षण करने लगा। जानते हैं, वह कौन था? वही वरुण नाग, जो भगवान् महावीर का भक्त था, सच्चा अहिंसक और तरुण तपस्वी। आज वह अपने देश की रक्षा के लिए अपने कर्त्तव्य के पालन के लिए सेना की कमाण्ड ले रहा है। उसके हृदय में देश का महान् गौरव है। वह उसकी रक्षा के लिए किसी से पीछे न रह सकेगा। आज वह अपनी जन्मभूमि के चरणों में अपना जीवन पुष्प चढ़ाने जा रहा है। उसने अपनी सेना को कूच का आदेश दिया। सेना चल पड़ी।

वरुण नाग के कमाण्ड में वैशाली की विशाल सेना राजपथ में बढ़ी चली जा रही थी। राजपथ के दोनों ओर दर्शकों की दीवार सी खड़ी थी। सेना का मार्च- गीत दर्शकों के मानस में तूफान मचा रहा था। लोग कह रहे हैं- वरुण नाग! वह वरुण नाग, जो किसी प्राणी को सताने में भी झिझकता है। आज वह युद्ध करेगा? क्या सचमुच देश की रक्षा कर सकेगा? क्या अहिंसक भी युद्ध कर सकता है? वरुणनाग की सेना युद्ध स्थल पर आ पहुँची। दोनों ओर की सेनाएँ अपने-अपने कमाण्डरों के आदेश की प्रतीक्षा कर रही है। दोनों ओर से पूरी तैयारियाँ हैं। विलम्ब केवल सेनापतियों के आदेश का है। मगध सेना नायक आया और व्यंग्य से बोला- वरुण नाग लो, शस्त्र सम्भालो और पहला वार तुम्हीं कर लो। मैं तुम्हें अवसर देता हूँ। अपनी वीरता का प्रदर्शन कर लो।

वरुण नाग ने कहा- मैं कायर नहीं हूँ, मैं किसी भी निरपराधी पर हाथ नहीं उठाता, पहला वार करना, मेरी रणनीति के विरुद्ध है। मैं और मेरी सेना तब तक वार नहीं करेंगे, जब तक की तुम पहले वार न कर लोगे। मगध सेना नायक! सुनो तुमने मुझे समझने में भूल की है। मैं अहिंसक हूँ, पर कायर नहीं। तुम्हारे व्यंग्य का उत्तर मैं रणस्थल में ही दूँगा। तुम मुझे क्या अवसर दोगे? लो, मैं ही तुम्हें अवसर देता हूँ। वार करो।

युद्ध का विगुल बजा। दोनों ओर की सेनाओं में तुमुल युद्ध छिड़ा। इतना भयंकर युद्ध जिसकी कल्पना करते भय लगता है। रक्त की नदियाँ बहनें लगीं। दोनों ओर के योद्धा धराशायी हो रहे हैं। इधर दोनों अपना युद्ध कौशल दिखला रहे हैं। एक न्याय के लिए देश की रक्षा के लिए जूझ रहा है और दूसरा अन्याय के लिए अपने प्रभु की राज्य लिप्सा के लिए प्राणों से खेल रहा है। लड़ते दोनों हैं, पर एक अपना कर्त्तव्य समझकर लड़ रहा है और दूसरा अपने स्वामी के भय से।

इधर वरुण नाग और मगध सेना-नायक दोनों बुरी तरह घायल हो गये। दोनों के शरीर रुधिर से निचुड़ रहे हैं। दोनों खून से होली खेल रहे हैं। मगध सेना नायक को अब भली भाँति ज्ञात हो गया है कि वरुण नाग कायर नहीं, एक महान् योद्धा है। दोनों अपने बल का और अपनी युद्ध कलाओं का प्रयोग कर रहे हैं। सहसा वरुण नाग का बाण मगध सेनानायक की छाती में जा लगा और वह मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़ा। सेनापति के गिरते ही मगध सेना में भगदड़ मच गयी। वैशाली की सेना विजय के गीत गाने लगी, हर्ष में झूमने लगी। वह विजयी हुई।

वरुण नाग की मन-वचन और कर्म की त्रियोगात्मक शक्ति युद्ध में जुटी तो उसने कमाल हासिल किया। युद्ध के बाद उसके मन का मोड़ आध्यात्मिक धारा की ओर मुड़ा। पानी का बहाव है, जी चाहे उधर मोड़ लो। मन का मोड़ है, जिधर मुड़ गया सो मुड़ गया। वीर जिधर बढ़ते हैं उधर ही कमाल हासिल करते हैं।

आपने देखा, वरुण नाग ने किसप्रकार अपने देश की रक्षा की? देश की रक्षा के लिए उस अहिंसक योद्धा ने अपने प्राणों की बाजी लगा दी। अहिंसक भी अपने देश की रक्षा के लिए युद्ध कर सकता है। यब बात वाणी से नहीं, आचरण कर के दिखा दी। आज वरुण नाग इस संसार में नहीं है पर वैशाली के इतिहास में वह आज भी जीवित है उसकी वीरता का आज बसाढ़ का प्रत्येक रज-कण वरुण नाग के स्वर में-स्वर मिला-मिलाकर यह मधुर संदेश दे रहा है।

पितृधरा हे जन्मभूमि! हे देश! प्रेम धन मेरे।
मैं यह जीवन-पुण्य चढ़ाता हूँ चरणों पर तेरे।।

देश की सुरक्षा के लिए और जो समाज की रक्षा करता है उसके लिए युद्ध अनिवार्य है। एक जैन सेनापति गुजरात का था जो अहिंसक था जो कभी एक मच्छर तक नहीं मारता था, पत्ता भी नहीं तोड़ता था, जो कच्चा पानी तक नहीं पीता था, छानकर के पीता था अन्यथा गरम करके पीता था वह तो अहिंसक था और सेनापति था। युद्ध के लिए जब वह सेनापति आगे बढ़ता है तो सब चर्चा करते है कि जो पत्ता भी नहीं तोड़ता है, जो पानी छानकर पीता है, शराब नहीं पीता है, रात को नहीं खाता है मांस नहीं खाता है, यह क्या युद्ध कर सकता है? आगे बढ़े। और युद्ध प्रारम्भ हो गया। शत्रु ने कहा सेनापति प्रहार करो, बाण चलाओ। मैं तुम्हें मौका देता हूँ। लेकिन सेनापति बोलता है कि नहीं मैं अहिंसक हूँ। कायर नहीं। मैं कभी भी न्याय के ऊपर प्रहार नहीं कर सकता हूँ। पहले तुम प्रहार करो। उसके बाद मैं प्रहार करूँगा। इससे पहले मैं प्रहार नहीं कर सकता हूँ। फिर युद्ध हुआ और युद्ध में, जो जैन सेनापति था वह विजयी हुआ और उसने हजारों व्यक्तियों को काट डाला। आचार्यश्री ने यह भी बताया कि जिसप्रकार चन्द्रगुप्त मौर्य ने सैनिकों को परास्त करके खदेड़ दिया। आचार्यश्री ने वहाँ बैठे व्यक्तियों को कहा कि अपने चन्द्रगुप्त मौर्य की किताब को पढ़ा होगा कि उनके राजनीतिक गुरु कौन थे? चाणक्य। और उनके धर्मगुरु कौन थे? जैनाचार्य भद्रबाहु स्वामी और आगे जाकर मेरे जैसे साधु

बने तो भी उन्होंने युद्ध किया। देश की रक्षा के लिए, न्याय की रक्षा के लिए, आप युद्ध करते हो तो आपके हाथ से कई व्यक्तियों की हत्या हो जाती है तो भी आप अधिक पापी नहीं हो। गीता में नारायण कृष्ण ने कहा कि हे अर्जुन! युद्ध करके मरो स्वर्ग मिलेगा नहीं तो युद्ध में जययुक्त हो तुमको धरती मिलेगी। इसलिए वीरो! तुम लोग भी युद्ध करते हो। न्याय से तुम लोग यदि कोई हत्या भी कर लेते हो तो उसको जैन धर्म में विरोधी हिंसा कहा है-

चक्रेणयः शत्रुभयंकरेण जित्वा नृपः सर्वनरेन्द्रचक्रम्।
समाधि चक्रेण पुनर्जिगाय महोदयो दुर्जयमोहचमक्रम्।।

साधारणतः लोग सोचते हैं कि जैनधर्म अहिंसा प्रधान धर्म है और जैन लोग सब कायर हैं, नहीं-नहीं ये जानते नहीं हैं। महात्मागाँधी के तीन गुरु थे। रेस्किन, टालस्टाई। वो तो केवल उनका साहित्य पढ़ करके उनको गुरु रूप में माना था और एक गुरु थे रायचंद्र। आप लोग जानते हैं रायचंद कौन थे? और कहाँ के रहने वाले थे? रायचंद गुजरात के थे और जैन थे।

मैं आप लोगों को यह बताना चाहता हूँ कि आप लोगों के ऊपर देश की सुरक्षा और समृद्धि अवलम्बित है। क्योंकि जब तक देश की सुरक्षा नहीं होगी देश कभी भी प्रगति नहीं कर सकता है। इसलिए आप लोगों को क्या करना चाहिए। कर्त्तव्य निष्ठ होना चाहिए। आप लोगों को मालूम होगा 1971 में जो भारत और पाकिस्तान का युद्ध हुआ उसके फिल्डमार्शल कौन थे? मानकशा। मानकशा ने अभी-अभी कुछ दिन पहले उपदेश दिया था। हमारे देश में अनादिकाल से ज्ञान, विज्ञान, आध्यात्मिक सब कुछ है, तथापि वर्तमान में हमारा देश प्रगति क्यों नहीं कर पा रहा है? अनुशासन की कमी और वह अनुशासन स्कूल में, कॉलेज में, बाजार में, व्यापार में, सेना में सबमें। अनुशासन हीनता से कभी भी राष्ट्र आगे नहीं बढ़ सकता है। अनुशासन हर क्षेत्र में चाहिए। अनुशासन यदि नहीं है; जैसे एक ट्रेन पटरी पर चलती है, जापान में एक ट्रेन 500 किलोमीटर, 450 किलोमीटर प्रति घंटा गमन करती है और अभी तक उस गाड़ी से एक भी दुर्घटना नहीं हुई। इसलिए मानकशा ने कहा था कि

''हमारे देश में वर्तमान में कमी है तो अनुशासन की कमी है। हर जगह में घोटाला ही घोटाला।'' उन्होंने तो यहाँ तक कहा था कि भारत में अनुशासनहीनता कहाँ तक है, भारत के लोग जहाँ-तहाँ थूक देंगे, जहाँ-तहाँ लोग पेशाब करेंगे, जहाँ-तहाँ गन्दगी फेंक देंगे। उन्होंने सिद्ध किया कि यहाँ से अनुशासन हीनता प्रारम्भ हुई है और अनुशासन हीनता आगे कहाँ तक फैल जाती है? घोटाला तक गमन करती है। इसलिए जीवन में अनुशासन चाहिए। अनुशासन के साथ-साथ दृढ़ता, साहस और अहिंसा भी चाहिए। जो वीर होते हैं वे कायर नहीं होते हैं परन्तु क्रूर भी नहीं होते हैं। महावीर भगवान् उनका नाम ही महावीर है और आप लोग उनकी आराधना करते हो। मैं आरती सुनता हूँ रोज वहाँ तक आवाज आती है। आप जिस देवी की आराधना करते हैं, देवी के एक हाथ में क्या है? तलवार। और देवी को आप लोग क्या मानते हो? जगदम्बा। जगदम्बा मतलब जगत्+अम्बा। अम्बा माने माँ। जगत् की माता। तो जगत् की माँ होकर भी तलवार हाथ में लेकर के क्यों खड़ी हुई है?

परित्राणाय हि साधुनाम् विनाशनाय च दुष्कृताम्।

माँ ने दुष्टों की हत्या के लिए, दुष्टों के विनाश के लिए एक हाथ में तलवार ली है और एक हाथ वरद हाथ है। रामचन्द्र कोदण्ड धारी हैं। कोदण्डधारी- बाणधारी और हनुमान गदा धारण करते हैं। ऐसा क्यों? इसका मतलब ये है यह अस्त्र-शस्त्र महिला, निर्दोष बच्चों, धार्मिक व्यक्ति के ऊपर प्रहार करने के लिए नहीं है। ये अस्त्र शस्त्र किसके ऊपर प्रहार करने के लिए हैं जो दुष्ट है, जो पापी हैं, जो दुर्जन हैं उनके लिए और वह भी कोई पापी को मारने के लिए नहीं उनके अन्दर जो पाप है उसको मारने के लिए है क्योंकि बिना पापी मरे पाप मरता नहीं है। इसलिए पापी से घृणा नहीं करना पाप से घृणा करना। पापी को कष्ट नहीं देना।

हम अभी-अभी कुछ दिन पहले जयपुर सेन्ट्रल जेल में गये थे। वहाँ सेन्ट्रल जेल को अभी एक नाम दिया गया है- सुधारगृह। माने जो गरीब है, पापी है, दुष्ट है वह भी दया और करुणा का पात्र हैं, उनका भी सुधार होना चाहिए वह

भी हमारा एक भाई है, जैसे हमारा कोई एक अंग घायल हो जाता है तो हम उसकी सुरक्षा करते हैं। इसी प्रकार समाज का कोई व्यक्ति यदि दुष्ट है, पापी है तो हमारा कर्त्तव्य हो जाता है कि उसका सुधार करना। यही अहिंसा है। इसलिए आप लोगों का कर्त्तव्य हो जाता है। जीवन में नैतिक आचरण करते हुए आप लोगों को आगे बढ़ना है। और जो नैतिक आचरण करते हुए देश की सेवा करते हैं वह मानव की सेवा करते हैं और जो सेवा करते-करते यदि मरते हैं, नारायण कृष्ण ने कहा युद्ध क्षेत्र में सैनिकों को मारते हुए, लाखों व्यक्तियों की हत्या करते हुए भी यदि कोई देश की रक्षा की लिए, राष्ट्र की रक्षा करने के लिए और मातृ जाति की रक्षा करने के लिए, सभ्यता और संस्कृति की रक्षा करने के लिए मरता है तो उसे स्वर्ग मिलेगा और जययुक्त होगा तो उसे धरती मिलेगी, इसलिए आप लोगों को इस पवित्र भावना से आपका काम करना चाहिए। केवल यह नौकरी है, नौकरी बजाना है ऐसा नहीं है। पवित्र भावना से आप लोग काम करो तब जाकर के आपका जो यह Work है वही Worship हो जायेगा। उदारभावना से प्रत्येक काम करना चाहिए। यदि उदारभावना से आप ये काम करते हो तो आप लोग भी सन्त हो। आदिनाथ भगवान् आदि ब्रह्मा ने पहले असी, मसी, कृषि आदि का उपदेश दिया। असी माने तलवार? क्योंकि जब तक हमारे हाथ में अस्त्र नहीं है देश की सुरक्षा नहीं होगी और जब तक देश की सुरक्षा नहीं होगी तब तक देश की सभ्यता और संस्कृति की भी सुरक्षा नहीं हो सकती है। इसलिए असी; उसके बाद मसी माने बुद्धिवान् बनो, ज्ञानी बनो क्योंकि Knowledge is Power.

बुद्धिर्यस्य बलंतस्य निर्बुद्धिस्य कुतोबल।

यदि ज्ञान नहीं है तो आपका शारीरिक बल पाशविक हो जायेगा। जिस प्रकार शेर दूसरों को खाता है और कष्ट देता है उसी प्रकार रावण के पास जो बल था वह दूसरों का नाश करने के लिए था और रामचन्द्र के पास जो बल था साधु, सन्त, गाय, मातृ-जाति की रक्षा के लिए बल काम में आया। इसलिए

विद्या विवादाय धनं मदाय शक्ति परेषां परपीड़नाय।

खलस्य साधोर्विपरीतमेतत् ज्ञानाय दानाय च रक्षणाय।।

विद्या विवादाय-विद्या प्राप्त करके वाद-विवाद नहीं करना चाहिए, अहंकार नहीं करना चाहिए। धनं मदाय- धन प्राप्त करके अहंकार नहीं करना चाहिए। शक्तिं परेषां परपीड़नाय- यदि शक्ति मिली जिस प्रकार कंस के पास शक्ति थी, रावण के पास शक्ति थी। उसी शक्ति से उसने क्या किया? साधु सन्त सबको कष्ट दिया। इसलिए आप लोग जितने बैठे हुए हो। आप लोगों का किसी का नाम रावण नहीं। क्यों नहीं? रावण तो महाविद्याधर था। उस समय में वह पुष्पक विमान में बैठकर उड़ता था और उसके पास 10 सिर थे। दशानन। दशानन मतलब जानते हो? 10 सिर। उसके पास विद्या थी 10 क्या सैंकड़ों सिर बना लेता था। परन्तु उसका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण जानते हो? दस सिर माने दस व्यक्तियों की बुद्धि थी। इसलिए दस सिर। ये Head ज्ञान का प्रतीक है और बीस हाथ थे। बीस हाथ माने 10 व्यक्तियों में कितने हाथ होते हैं? माने 10 व्यक्तियों में जितनी ताकत, शक्ति होती थी उतनी शक्ति उसमें थी। और उसकी लंका किसकी बनी हुई थी? सोने की थी परन्तु आप लोग रावण की पूजा क्यों नहीं करते हो? किसकी पूजा करते हो, बताओ तो, परन्तु रामचन्द्र की पूजा क्यों करते हो? रामचन्द्र 14 वर्ष तक वनवास में रहे, फलादि खाये, जंगल में रहे तो भी क्यों उनकी पूजा करते हो। रामचन्द्र की क्यों? उन्होंने रावण को मारा इसलिए? रावण ने तो कम व्यक्तियों का मारा रामचन्द्र ने ज्यादा व्यक्तियों को मारा है। रामचन्द्र ने जितने व्यक्तियों को मारा उतना तो रावण ने भी नहीं मारा। इस दृष्टि से तो राम तो उनसे भी बड़े पापी हैं। रावण दुष्ट था और रामचन्द्र ने दुष्टों को मारा इसलिए आप लोग रोज रामचन्द्र का नाम लेते हो। परन्तु करते हो काम रावण का "मुँह में राम नाम और बगल में छुरी" यह करते हो। आप तो हर दशहरा में किसको जलाते हो? रावण को परन्तु अन्दर जो बैठा हुआ रावण है उसको मारते हो क्या? और पहले एक रावण हुआ था, एक ही सीता का हरण किया था केवल हरण किया, अशोक वाटिका में सुरक्षित रखा था छुआ तक नहीं था। परन्तु आज घर-घर

में रावण है, मन-मन में रावण है। आज भारत के लोग राम का नाम लेते हैं और मूर्ति बनाते हैं उसकी पूजा करते हैं और भारत की अनेक सीताओं का हरण करते हैं, अपहरण करते हैं और राम का नाम लेते हैं। आप लोगों को शर्म आनी चाहिए। आप लोग क्या भारतीय हो? जिस समय विश्व गुरु रविन्द्रनाथ टैगोर जापान में गये थे। वहाँ के कुछ सज्जन आ करके पैर छू करके नमस्कार करने लगे तो रवीन्द्रनाथ टैगोर बोलते हैं, मुझे नमस्कार मत करो, मैं कोई साधु सन्त नहीं हूँ। जापान के लोग क्या बोलते हैं? गुरुदेव भारत के प्रत्येक व्यक्ति हमारे लिए नमस्करणीय, पूजनीय हैं। भारत के प्रत्येक व्यक्ति साधु-सन्त हैं। देखो! दूसरे राष्ट्र भारत की ओर अभी किस दृष्टि से देख रहे हैं और भारत के लोग क्या कर रहे हैं? इस बात की पुष्टि करने के लिए आचार्यश्री ने एक छोटी सी घटना सुनाते हुए कहा कि- एक राजा के पास एक पुरोहित का लड़का गया और पुरोहित के लड़के ने उपदेश दिया "जो वैश्यागमन करते हैं परस्त्री गमन करते हैं शराब पीते हैं, मांस खाते हैं वे नरक जाते हैं। तो राजा वैश्यागामी था, परस्त्री गमन करता था, अन्याय, अत्याचार करता था इसलिए राजा ने उसे कैद में डाल दिया। पुरोहित विचार करता है कि मेरा लड़का वापस क्यों नहीं आया? दूसरे दिन वह जाता है देखता है कि लड़का कहाँ है? जेल में। राजा को वह पूछता है कि मेरे लड़के को आपने जेल में क्यों डाल दिया? राजा ने कहा- कि तुम्हारा लड़का बोलता है कि जो परस्त्री गमन करता है, वैश्यागमन करता है, अन्याय करता है, शराब पीता है, मांस खाता है, वह नरक में जाता है, क्या ऐसे काम करने से वह नरक चला जायेगा? पुरोहित बोलता है नहीं-नहीं। मेरा लड़का सही बोलता है। मेरा लड़का यह बताया जो एक बार परस्त्री गमन करता है, वैश्यागमन करता है वह तो नरक जाता है परन्तु जो बोतल-बोतल शराब पीता है, प्लेट-प्लेट मांस खाता है, परस्त्री व वैश्यागमन करता है वह स्वर्ग में जाता है। इससे राजा संतुष्ट होकर उस लड़के को मुक्त कर देता है और पुरस्कृत करता है। इसीप्रकार आप भारतीय लोग जो बड़े-बड़े सत्तावान,

धनवान लोग हैं वे करोड़ों का घोटाला करेंगे, गुन्डागर्दी करेंगे उन्हें तो आप कुछ नहीं कहते हो और उनकी तो आप सुरक्षा करते हो और जो दीन-दुर्बल, गरीब हैं निर्दोष होते हुए भी उनको कष्ट देते हो। इसलिए सामान्य व्यक्ति आप लोगों से कतराते हैं, डरते हैं, दूर रहते हैं, परन्तु आप लोगों को विचार करना चाहिए हमें जिस प्रकार कष्ट अप्रिय है उसी प्रकार दूसरों को भी कष्ट अप्रिय है। इसलिए किसी को भी मनसा, वचसा, कर्मणा आप लोगों को कष्ट नहीं देना चाहिए।"

उपदेश के बाद आचार्यश्री को वहाँ के Constable ने आभार व्यक्त किया और कहा कि हमारे इस प्राचीन M.B.S. के इतिहास में प्रथम बार है जहाँ पर साधुसन्तों का प्रवचन पुलिस एवं सैनिकों के लिए हुआ। इससे हम अत्यधिक प्रभावित हैं एवं समय-समय पर ऐसे साधु-सन्तों का प्रवचन होने पर हमें उचित मार्गदर्शन मिलता रहेगा। आचार्यश्री ने स्व-रचित अनेक साहित्य वहाँ के अधिकारी व कार्यकर्ताओं को आशीर्वाद स्वरूप में दिया। जिसे वहाँ के अधिकारी गण ने अत्यधिक उत्साह व कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार किया। उपदेश के बाद तो आचार्यश्री जब अन्य साधुओं के साथ शौचक्रिया के लिए जाते थे तब जवान लोग परेड़ रोककर साधुओं को (सेल्यूट) Salute करते थे। रास्ते में जहाँ भी देखने पर नमोस्तु करते थे। कुछ जवान बाद में आचार्यश्री के पास में आकर आचार्यश्री द्वारा रचित साहित्य व नियम भी लेते रहे।

प्रस्तुति- मोनिका सारगिया, पूनम जैन, अश्विना खोड़णिया।

भरत चक्रवर्ती से भारत

भरत हुए चक्रधर....आदिनाथ के पुत्रवर।
भारत देश प्रसिद्ध हुआ....आपसे नामकरण हुआ।
हमारा देश इण्डिया नहीं....इडियटों का देश नहीं। ला..ला..ला..ला..

''सैनिक की आत्मकथा''

(रागः 1. जिया बेकरार है... 2. जीना यहाँ...)

सैनिक मेरा नाम है, रक्षा करना काम है।
आक्रमण को निरस्त करके, शान्ति स्थापना काम है... (स्थायी)...
राष्ट्रभक्ति कर्त्तव्यनिष्ठा अनुशासन व देश की रक्षा...2
अदम्य साहस वीरता सह, कष्ट सहकर न्याय की रक्षा...2
संकल्पी हिंसा मैं न करूँ, हिंसा का प्रतिकार करूँ...2
डॉक्टर सम देश हित हेतु, राष्ट्रीय समस्या दूर करूँ...2 ...(1)...
विरोधी हिंसा इसे कहते, महाज्ञानी तीर्थंकर हैं...2
राम पाण्डव चन्द्रगुप्त भी, किये थे महासमर है...2
न्याय रक्षा व शान्ति के हेतु, करता रहूँ प्रयास है...2
निर्दोषी जीवों की रक्षा हेतु, करूँ यह प्रयास है...2 ...(2)...
करोड़ों वर्ष पहले तब, आदिनाथ भगवान् हैं...2
राज्य व्यवस्था/(सुरक्षा) हेतु पहले, असि किया प्रणयन है...2
असि जीविका करने वाले, होते थे सब क्षत्रिय...2
क्षत से रक्षा करने वाले, होते हैं सच्चे क्षत्रिय...2 ...(3)...
क्षत्रिय वंश में उत्पन्न हुए, तीर्थंकर राम-कृष्ण...2
अनेक केवली गणधर सन्त/(बुद्ध), शलाका पुरुष गण...2
विदेशी आक्रान्ता सेल्युकस को, चन्द्रगुप्त ने भगाया...2
कलिंग जिन को खारवेल ने, नन्दवंश से है लाया...2 ...(4)...
स्वतन्त्रता हेतु आद्य संग्राम, छेड़ा है राणा प्रताप...2
शिवाजी उसको आगे बढाया, अन्त में देश स्वतन्त्र...2
मेरे नाम पर अनेक हुए, दुष्ट क्रूर अत्याचारी...2
रक्षा के बदले भक्षक/(राक्षस) बनके, हुए है दुराचारी...2 ...(5)...
रावण कंस दुर्योधन तथा, हिटलर व गद्दाफी...2

क्रूर हिंसक पशु से भी क्रूर, हुए हैं वे अत्याचारी...2
ऐसा मानव साक्षात् दानव, रक्षक नहीं राक्षस...2
स्व-पर कष्ट दायक बनकर, मरके नरकवास...2 ...(6)...
रक्षा जो करते वीरगति पाते, अथवा जो साधु बने...2
कर्मशत्रु को विनाश करके, अन्त में श्री सिद्ध बने...2
अतएव मुझे हिंसक न मानो, करूँ न संकल्पी हिंसा...2
'कनकनन्दी' की लेखनी/(कविता) द्वारा, लिखा मैं स्व-आत्मकथा...2...(7)...

आचार्य महावीर कीर्ति जी

अठारह भाषा के जो ज्ञानी हुए....आगम ज्योतिषी ज्ञानी हुये।
वैयावृत्ति में अग्रणी हुए....निमित्त ज्ञानी प्रसिद्ध हुए।
पंचपदवी के प्रदाता हुए....महावीरकीर्ति आचार्य हुए।। ला..ला..ला..ला..

आचार्य विमलसागर जी

महावीरकीर्ति के शिष्य प्रधान....निमित्त ज्ञान में प्रवीण जान।
विमल सिन्धु है आप महान्....वात्सल्य रत्न आप महान्।
''कनकनन्दी'' के प्रथम गुरु....आचार्य प्रवर महान् गुरु।। ला..ला..ला..ला..

आचार्य कुन्थुसागरजी

महावीरकीर्ति के शिष्य प्रवर....गणधर आचार्य कुन्थुसागर।
''कनकनन्दी'' आदि शिष्य तुम्हारे....अनेक आचार्य शिष्य तुम्हारे।
अनेक विद्या के ज्ञान अपार....अनेक भाषा में आप प्रवर।। ला..ला..ला..ला..

आचार्य भरतसागरजी

विमल सिन्धु के शिष्य महान्....भरत सागर गुण निधान।
विनम्र स्वभावी शान्त गंभीर....आगमज्ञान में आप सागर।
''कनकनन्दी'' के शिक्षा प्रदाता....ग्रन्थ छपाने में प्रेरणा दाता।। ला..ला..ला..ला..
''कनकनन्दी'' की शिक्षा प्रदात्री....अनेक साधु की शिक्षा दात्री।। ला..ला..ला..ला..

आचार्य श्री कनकनन्दीजी के शोधपूर्ण-ग्रन्थ

11-9-2008 से परिवर्तित मूल्य

I आध्यात्मिक

1.	अनेकान्त सिद्धान्त (द्वि. सं.)	41
2.	अहिंसामृतम् (द्वि. सं.)	25
3.	अनेकान्त के प्रकाश में मोक्षमार्ग	21
4.	अपुनरागमन पथः मोक्षमार्ग	05
5.	आदर्श नागरिक की प्रायोगिक क्रियाएँ	10
6.	आहार दान से अभ्युदय	15
7.	उपवास का धार्मिक वैज्ञानिक विश्लेषण	25
8.	जीवन्त धर्म सेवा धर्म	15
9.	दिगम्बर साधु का नग्नत्व एवं केंशलोंच (हिन्दी, मराठी, गुजराती, उर्दू- 11 सं.)	10
10.	धर्म, जैन धर्म तथा भ. महावीर	75
11.	बन्धु बन्धन के मूल	51
12.	विनय मोक्षद्वार (द्वि. सं.)	31
13.	विश्व धर्म सभा (समवशरण)	51
14.	क्षमा वीरस्य भूषणम् (तृ.सं.)	35
15.	श्रमण संघ संहिता	61
16.	त्रैलोक्य पूज्य ब्रह्मचर्य (द्वि. सं.)	35
17.	सत्य परमेश्वर	75
18.	सनातन वैदिक धर्म में भी वर्णित है समाधिमरण	21
19.	मौन रहो या सत्य (हित-मित-प्रिय) कहो!	101
20.	समग्र विकास के उपाय स्वाध्याय	101

II आध्यात्मिक-विज्ञान (गणित)

1.	अनन्त शक्ति सम्पन्न परमाणु से लेकर परमात्मा	201
2.	धर्म विज्ञान बिन्दु	15
3.	धर्म-दर्शन-विज्ञान प्रवेशिका-(भाग-1) स. सं.	15
4.	धर्म-दर्शन-विज्ञान प्रवेशिका-(भाग-2) स. सं.	20
5.	धर्म-दर्शन-विज्ञान प्रवेशिका-(भाग-3) स. सं.	30
6.	धर्म-दर्शन एवं विज्ञान (द्वि.सं.)	101
7.	ब्रह्माण्डीय जैविक-भौतिक एवं रसायन विज्ञान	151
8.	ब्रह्माण्ड के रहस्य	25
9.	ब्रह्माण्ड एवं प्रतिब्रह्माण्डः धार्मिक वैज्ञानिक विश्लेषण	15
10.	विश्व विज्ञान रहस्य	151
11.	विश्व प्रतिविश्व एवं श्याम-विवर	35
12.	वैज्ञानिक आईन्स्टीन के सिद्धान्तों को पुनः परीक्षण की आवश्यकता	15
13.	ब्रह्माण्ड-काल-आकाश एवं जीवः अनन्त (बड़ा)	201
14.	ब्रह्माण्ड-काल-आकाश एवं जीवः अनन्त (छोटा)	25
15.	सूक्ष्म जीव विज्ञान से शुद्ध जीव विज्ञान	801
16.	वैज्ञानिक डार्विन तथा अन्यान्य जीव विज्ञान अधिक असत्य आंशिक सत्य (धार्मिक तथा वैज्ञानिक दृष्टि से)	101

III आध्यात्मिक मनोविज्ञान

1.	अतिमानवीय शक्ति (द्वि.सं.)	51
2.	क्रान्ति के अग्रदूत (द्वि.सं.) (तीर्थंकर का धार्मिक एवं वैज्ञानिक विश्लेषण)	35
3.	कर्म का दार्शनिक एवं वैज्ञानिक विश्लेषण (द्वि.सं.)	75

4. ध्यान का वैज्ञानिक विश्लेषण (द्वि.सं.) (हिन्दी,अंग्रेजी) 51
5. लेश्या मनोविज्ञान (द्वि.सं.) 21
6. तत्त्व चिन्तन-सर्व धर्म समता से विश्वशान्ति 51
7. मानव-इतिहास एवं मानव-विज्ञान 401
8. अनन्त परम सत्य का समग्र उल्लेख... संभव नहीं... 101
9. कालिकाल में साधु क्यों बनें? 75

IV शिक्षा-मनोविज्ञान

1. आचार्य कनकनन्दी की दृष्टि में शिक्षा 11
2. नैतिक शिक्षा एवं सामान्य ज्ञान 40
3. सर्वोदय शिक्षा मनोविज्ञान (वृहत्) 401
4. सर्वोदय शिक्षा मनोविज्ञान (लघु) 21
5. सर्वोदय तथा संकीर्ण शिक्षा के स्वरूप एवं परिणाम 21

V शोध (धार्मिक, दार्शनिक, वैज्ञानिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक)

1. अग्नि परीक्षा 21
2. अनुभव चिन्तामणि 15
3. उठो! जागो! प्राप्त करो! (हिन्दी, कन्नड) (द्वि.सं.) 11
4. करें साक्षात्कार यथार्थ सत्य का 50
5. करें साक्षात्कार यथार्थ धर्म एवं भाव का 40
6. जैन धर्मावलम्बी संख्या और उपलब्धि 21
7. जीवन विकास एवं विनाश के सूत्र 21
8. जैन धर्मावलम्बियों की दिशा-दशा-आशा 5
9. जैन एकता एवं विश्वशान्ति 5

10. धार्मिक कुरीतियों का परिशोधन (द्वि.सं.) 10
11. नग्न सत्य का दिग्दर्शन (द्वि.सं.) 25
12. निकृष्टतम स्वार्थी तथा क्रूरतम प्राणीः मनुष्य 21
13. प्रथम शोध-बोध-आविष्कार एवं प्रवक्ता 75
14. प्राचीन भारत की 72 कलाएँ (द्वि.सं.) 21
15. भारत को गारत एवं महान् भारत बनाने के सूत्र 15
16. भारत के सर्वोदय के उपाय 5
17. मानवीय निकृष्ट संघर्ष का इतिहास 10
18. मेरा लक्ष्य-साधना एवं अनुभव (आचार्य श्री की जीवनी) 10
19. ये कैसे धर्मात्मा, निर्व्यसनी, राष्ट्रसेवी 21
20. व्यसन का धार्मिक एवं वैज्ञानिक विश्लेषण (च.सं.) 51
21. विज्ञान को भी अविज्ञात सत्य 20
22. शाश्वत समस्याओं का समाधान 25
23. शिक्षा, संस्कृति एवं नारी गरिमा 61
24. संगठन के सूत्र (द्वि.सं.) 41
25. संस्कार (हिन्दी, गुजराती, मराठी, कन्नड) 15वां सं. 10
26. संस्कार (वृहत्) 50
27. सत्यान्वेषी आ. कनकनन्दी का व्यक्तित्व एवं कृतित्व 10
28. संस्कृति की विकृति 10
29. संस्कार और हम 35
30. हिंसा की प्रतिक्रिया हैः प्राकृतिक प्रकोपादि (द्वि.सं.) 35
31. क्षमा वीरस्य भूषणम् (तृ.सं.) 21
32. विभिन्न क्रम विकासवाद एवं परम आध्यात्मिक विकासवाद 25
33. भारत की अन्तरङ्ग खोज 10

34. विभिन्न भावात्मक प्रदूषण एवं भ्रष्टाचारः कारण तथा निवारण 41
35. वर्तमान की आवश्यकताः धार्मिक उदारता न कि कट्टरता 15
36. वैश्वीकरण, वैश्विक-धर्म एवं विश्वशान्ति 21
37. वैज्ञानिक आध्यात्मिक धर्मतीर्थ प्रवर्तन 51
38. अभी की समस्याएँ- सभी के समाधान 21
39. मानव धर्मः स्वरूप एवं परिणाम 15
40. मानव मन की विकृतियों का अनुसंधान प्रायोगिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि 41
41. विकास के चतुः आयाम सिद्धान्त 51
42. सर्वोच्च शाश्वतिक विकासः आध्यात्मिक ज्ञानानन्द 201

VI अनुवाद, टीका, समीक्षा (आध्यात्मिक विज्ञान)

1. इष्टोपदेश (आध्यात्मिक-मनोविज्ञान) 101
2. पुरुषार्थ सिद्धयुपाय (अहिंसा का विश्व स्वरूप) 201
3. विश्व द्रव्य-विज्ञान (द्रव्य संग्रह) 101
4. स्वतन्त्रता के सूत्र (मोक्ष शास्त्र/तत्वार्थ सूत्र) द्वि.सं. 201
5. सत्यसाम्यसुखामृतम् (प्रवचनसार) 601

VII मीमांसा, समालोचना, संकलन

1. कौन है विश्व का कर्त्ता-हर्त्ता-धर्त्ता? 21
2. ज्वलन्त शंकाओं का शीतल समाधान (द्वि.सं.) 75
3. जिनार्चना पुष्प-1 (तृ.स.) 75

4. जिनार्चना पुष्प-2 21
5. निमित्त उपादान मीमांसा (द्वि.सं.) 21
6. पुण्य-पाप मीमांसा (द्वि.सं.) 35
7. पूजा से मोक्ष, पुण्य, पाप भी 41
8. भाग्य एवं पुरुषार्थ (हिन्दी, मराठी) पं. सं. 15
9. शोधपूर्ण ग्रन्थ तथा ग्रन्थकर्त्ता आ. कनकनन्दी 10
10. अमृततत्त्व की उपलब्धि के हेतु समाधि-मरण 40
11. परोपदेश कुशल बहुतेरे... 5
12. विविध दीक्षा विधि 31
13. विश्व हितकारी जैन धर्म का स्वरूप 10

VIII इतिहास

1. अयोध्या का पौराणिक, ऐतिहासिक एवं राजनैतिक विश्लेषण 35
2. ऋषभ पुत्र भारत से भारत (द्वि.सं.) 35
3. धर्म प्रवर्तक 24 तीर्थंकर (द्वि.सं.) 21
4. पार्श्वनाथ का तपोपसर्ग कैवल्य धामः बिजौलिया 35
5. भारतीय आर्य कौन कहाँ से- कब से कहाँ के? 50
6. युग निर्माता भ. ऋषभदेव (द्वि.सं.) 61
7. युग निर्माता भ. ऋषभदेव (पद्यानुवाद) 5
8. विश्व इतिहास 51

IX स्मारिका (वैज्ञानिक संगोष्ठी)

1. कर्म सिद्धान्त और उसके वैज्ञानिक मनोविज्ञान एवं सामाजिक आयाम 60

2. शिक्षा-शोधक-स्मारिका 100
3. स्मारिका (स्वतन्त्रता सूत्र में विज्ञान) 81
4. स्मारिका (स्वतन्त्रता के सूत्र में विज्ञान) 51
5. जैन धर्म में विज्ञान 150
6. भारतीय संस्कृति में विश्व शान्ति और पर्यावरण सुरक्षा के सूत्र 20
7. मन्थन (जैन दर्शन एवं विज्ञान)

X स्वप्न, शकुन-भविष्य विज्ञान, मंत्र सामुद्रिक शास्त्र (शरीर से भविष्य ज्ञान)

1. सर्वाङ्ग विज्ञान की वैज्ञानिक गवेषणा (भाव-भाग्य तथा अङ्ग विज्ञान) 251
2. भविष्य फल विज्ञान (द्वि.सं.) 301
3. मंत्र-विज्ञान (द्वि.सं.) 35
4. शकुन-विज्ञान 75
5. स्वप्न-विज्ञान (द्वि.सं.) 101

XI स्वास्थ्य-विज्ञान

1. समग्र स्वास्थ्य के उपायः तपस्या 25
2. आदर्श विचार-विहार-आहार 75
3. धर्म एवं स्वास्थ्य विज्ञान (भाग-1) तृ.सं. 50
4. धर्म एवं स्वास्थ्य विज्ञान (भाग-2) 21
5. शारीरिक-मानसिक-आध्यात्मिक स्वास्थ्य के विविध आयाम 201

XII प्रवचन

1. क्रान्ति दृष्टा प्रवचन 11
2. जीने की कला (संवर्द्धित द्वि.सं.) 25
3. भ. महावीर तथा उनका दिव्य सन्देश 5
4. भारत को पुनः विश्वगुरु बनाने के लिए समग्र क्रान्ति चाहिए 11
5. मनन एवं प्रवचन (द्वि.सं.) 10
6. विश्वशान्ति के अमोघ-उपाय (द्वि.सं.) 10
7. विश्व धर्म के दस लक्षण 41
8. व्यक्ति एवं समाज निर्माण के आद्य कर्त्तव्य 15
9. शान्ति क्रान्ति के विश्व नेता बनने के उपाय 41
10. समग्र क्रान्ति के उपाय 15
11. भ्रष्टाचार-हिंसा मुक्ति 25
12. दिव्य उपदेश 51

XIII कथा

1. कथा सुमन मालिका 15
2. कथा सौरभ 21
3. कथा पारिजात 15
4. कथा पुष्पाञ्जली 15
5. कथा चिन्तामणि 15
6. कथा त्रिवेणी 8

XIV गीताञ्जली (कविता) विभाग

1.	बाल-आध्यात्मिक-गीताञ्जली (गीताञ्जली धारा-1)	31
2.	प्रौढ़ आध्यात्मिक गीताञ्जली (गीताञ्जली धारा-2)	51
3.	जैन आध्यात्मिक गीताञ्जली (गीताञ्जली धारा-3)	51
4.	नैतिक आध्यात्मिक गीताञ्जली (गीताञ्जली धारा-4)	51
5.	प्रकृति (पर्यावरण) गीताञ्जली (गीताञ्जली धारा-5)	51
6.	विविध गीताञ्जली (गीताञ्जली धारा-6)	21
7.	आत्मकल्याण-विश्वकल्याण गीताञ्जली	51
8.	म.आ.वैज्ञानिक तीर्थंकरों क व्यक्तित्व-कृतित्व-शिक्षा	31
9.	आध्यात्मिक क्रान्ति-गीत (संघस्थ साधु-साध्वी रचित)	

XIV अंग्रेजी साहित्य

1.	Fate and Efforts (II.ed.)	25
2.	Leshya Psychology (II.ed.)	21
3.	Moral Education	51
4.	Nakedness jof Digamber Jain Saints and Kesh lonch (III.ed.)	21
5.	Sanskars	10
6.	Sculopr the Rishabhdeo	51
7.	Phylosophy of Scientific Religion	51
8.	What kinds of Dharmatma (piousman) these are	51

XVI डॉ. एन.एल कछारा के साहित्य (संस्थान के सचिव)

1.	जैन कर्म सिद्धान्तः आध्यात्म और विज्ञान	50
2.	समवशरण (आ. कनकनन्दीजी से भेंट वार्ता)	
3.	Jain Doctrine of Karma	35

4.	षट्द्रव्य की वैज्ञानिक मीमांसा	300
	जैन दर्शन सम्बन्धी अंग्रेजी में डाक्यूमेन्ट्री फिल्म सी.डी.	

XVII आचार्यश्री के आगामी प्रकाशनाधीन ग्रन्थ

1. सम्पूर्ण कला एवं वाणिज्य, न्याय, राजनीति, अर्थशास्त्र एवं समाज विज्ञान (नीतिवाक्यामृतम्)
   (शीघ्र प्रकाशनाधीन) :- पृष्ठ प्रायः 1500
2. परम्परा, धर्म एवं विज्ञान :- परम्पराओं में धर्म क्या है? अधर्म क्या है? विज्ञान क्या है? अविज्ञान क्या है? यह सिद्ध किया जायेगा। :- पृ. प्रायः 100
3. परम पर्यावरण वैज्ञानिक तीर्थंकर एवं पर्यावरण की सुरक्षाः- प्रायः पृ. 400 से 500
4. कल्याणकारक :- जैन आयुर्वेद विज्ञान-वैज्ञानिक समीक्षा :- पृ. प्रायः 1100
5. भाव ही- कल्पवृक्ष, चिन्तामणि, कामधेनु- पृ. प्रायः 200

XVIII ताम्र-पत्र में उत्कीर्ण ग्रन्थ

प्रकाशक एवं अर्थ सहयोग- प्रो. प्रभात कुमार जैन, सपरिवार

	(ग्रन्थ)	(लागत मूल्य)
1.	द्रव्य संग्रह	8500
2.	समाधि तंत्र	16000
3.	तत्वार्थ सूत्र	52000
4.	इष्टोपदेश	
5.	भक्तामर स्तोत्र	

6. कषाय पहुड-सिद्धान्त सूत्र

ताम्र-पत्र के ग्रन्थ लागत मूल्य से भी कम मूल्य में उपलब्ध है!

ताम्र-पत्र के ग्रन्थ तथा आधी छूट में आचार्यश्री कनकनन्दीजी के ग्रन्थ एवं प्राचीन ग्रन्थ क्रय करने के लिए सम्पर्क करें।

XIX केलण्डर

1. जीवनोपयोगी दोहा
2. आ. कनकनन्दी श्रीसंघ तथा भक्त-शिष्यों द्वारा धर्म प्रचार
3. आ. कनकनन्दी की आध्यात्मिक यात्रा
4. आ. कनकनन्दी श्रीसंघ के नियम

सम्पर्क सूत्र

1. डॉ. नारायणलाल कछारा (सचिव)
   55, रवीन्द्र नगर, उदयपुर (राज.)- 313001
   फोन नं. (0294)- 2491422, मो.- 9214460622
   ई-मेल- nlkachhara@yahoo.com
2. प्रो. प्रभात कुमार जैन (संघस्थ आ. कनकनन्दी)
   के.एच. 93, एफ-एफ-2, कविनगर, गाजियाबाद (उ.प्र.)-251002
   मो. 09211541266, 9971931442

विज्ञान मेला में आ. कनकनन्दी ससंघ

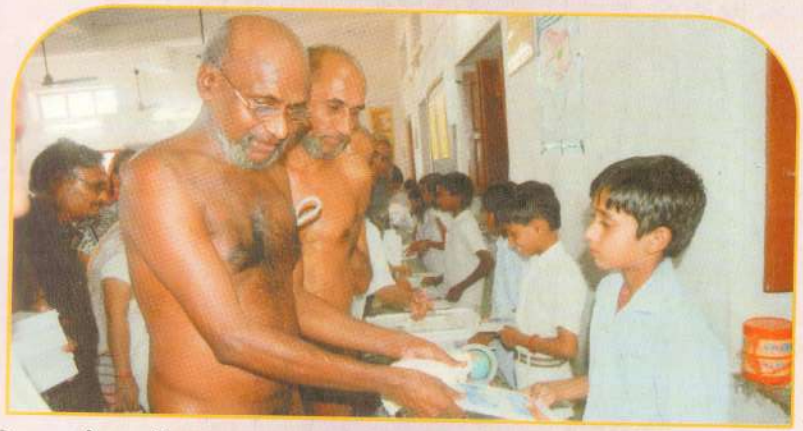

विज्ञान मेला में आ. कनकनन्दी बाल-वैज्ञानिकों को स्व-रचित पुस्तक पुरस्कार में देते हुए। (सेमारी-2011)

आ. कनकनन्दी के भक्त-शिष्य पर्युषण पर्व में

Prof. (Dr.) Sohan Raj Tater delivering Lecture as Upasak during Jain Paryushan Parva at Bhayander(Mumbai) from 26-8-2011 to 03-09-2011.

शिक्षा एवं विश्व-शान्ति की चर्चा

आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव तथा डॉ. शरतचन्द्र पुरोहित (पूर्व निर्देशक राजस्थान शिक्षा अनुसन्धान-केन्द्र तथा वर्तमान में यूनिसेफ के कार्यकर्ता) शिक्षा एवं विश्वशान्ति सम्बन्धी चर्चा करते हुए। (पाडवा 2008)

विश्वधर्म संसद का नगर

पाँचवी विश्वधर्म संसद के कन्वेन्शन सेंटर से मेलबर्न नगर (आस्ट्रेलिया का एक दृश्य। इस धर्मसभा में आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव के शिष्य डॉ. प्रो. कच्छारा ने भाग लिया। (2009)